संघर्ष संवाद

अक्टूबर 2012 नई दिल्ली

जल सत्याग्रह स्थल पर लगाई धारा-144

कूडनकुलम: रिएक्टर का धेराव कर रहे लोगों पर बर्बर लाठी चार्ज

पोटका में आज से 24 घंटे का जनता कर्फ्यू

आगरा में किसानों पर लाठीचार्ज और फायरिंग

भूमिहीन किसानों पर लाठीचार्ज, कई घायल

कूडनकुलम: बर्बर दमन के बीच जारी जनांदोलन को देश भर से समर्थन

कूडनकुलम: आंदोलन से जुड़े आठ हज़ार लोगों पर सरकार ने देशद्रोह के मुकदमे लगा दिए हैं

भूमि अधिग्रहण का विरोध कर रहे किसानों पर बरसीं लाठियां

कारगिल विजय के बाद अब जल,जंगल जमीन की रक्षा की जंग की शुरूआत

पोस्को: बर्बर दमन व छल के बीच ज़ारी है प्रतिरोध

हिमाचल प्रदेश
- लुहरी जल विद्युत परियोजना विरोधी आंदोलन

उत्तर प्रदेश
- जनद्रोही कानूनों और राज्य दमन के खिलाफ लखनऊ में सात दिवसीय साझा दस्तक
- करछना आंदोलन : जमीन न देने का संकल्प

हरियाणा
- हरियाणा में परमाणु ऊर्जा के विरोध में जय जवान, जय किसान

मध्य प्रदेश
- संघर्ष की राह बहुत पथरीली है . . .
- हरदा जल सत्याग्रह : जितनी ताकतवर, उतनी कमजोर सत्ता
- अभी लड़ाई जारी है ....

झारखण्ड
- नगड़ी के रैयतों को न्याय कौन देगा?
- कांके नगड़ी में भूमि अधिग्रहण के विरोध में स्थानीय आदिवासियों का संघर्ष
- पोटका में भूषण स्टील प्लांट के खिलाफ 22 सितंबर से धरना जारी....

तमिलनाडु
- कुडनकुलम परमाणु पॉवर प्लांट विरोधी आंदोलन

राजस्थान
- पहाड़ी बचाने के मोर्चे पर फौजी
- राजकीय दमन के खिलाफ सम्मेलन

छत्तीसगढ़
- बसगुड़ा कांड : खूनी चेहरे के रंग–रोगन की कवायद
- याद किये गये शहीद नियोगी

ओडिशा
- पोस्को : बर्बर दमन व छल के बीच जारी है प्रतिरोध

लुहरी जल विद्युत परियोजना

आफत को सरकारी न्यौता और विरोध में खड़े लोग

हिमाचल प्रदेश में प्रस्तावित 775 मेगावाट की लुहरी जल विद्युत परियोजना का विरोध दिनोंदिन मुखर हो रहा है। प्रभावित होनेवाले के बीच एकजुटता भी बनी है। दूसरी तरफ प्रशासन तंत्र और एसजेवीएनएल परियोजना को आकार देने के लिए तरह–तरह के हथकंडों को भी आजमा रहे हैं। ग्राम सभाओं पर दबाव बनाया जा रहा है कि परियोजना के लिए अनापत्ति प्रमाणपत्र जारी हो जाये।

परियोजना के लिए मंडी, शिमला और कुल्लू के क्षेत्रों से गुजरती 9 मीटर व्यास की 38 किलोमीटर लंबी सुरंग बनायी जानी है। सुरंग बनी तो सतलुन नदी का बहता आखिरी हिस्सा भी परियोजना में लुप्त हो जायेगा। इसका स्थानीय लोगों की आजीविका पर बहुत बुरा असर पड़ेगा। परियोजना के सुरंग वाले प्रारूप के विरोध का यह बड़ा आधार है। प्रभावित क्षेत्रों में सतलुज पर बनी दूसरी सुरंग परियोजनाओं का यही सबक है कि सुरंग के ऊपर बसे गांव जलवायु परिवर्तन की चपेट में आ जाते हैं। पानी के स्रोत सूखने लगते हैं, खेती की नमी घट जाती है, घरों तक में भी दरारें पड़ जाती हैं, खेती और बागवानी बर्बाद हो जाती है।

मई 2011 में आयोजित हुई जन सुनवाइयों से लेकर विश्व बैंक दल के हालिया दौर तक में लोग परियोजना पर अपना तीखा विरोध दर्ज कर चुके हैं।

लेकिन आज तक ऐसी परियोजनाओं में सुरंग के प्रभावों का कोई आंकलन नहीं किया गया। बाद में होनेवाले भीषण नुकसानों का कोई मुआवजा नहीं दिया गया। प्रभावित गांवों के लोग दर–दर की ठोकरें खाने को मजबूर हो जाते हैं। गांवों में टैंकरों से पानी लाने की मजबूरी बन जाती है। रामपुर और कड़छम वांग्तू जैसी परियोजनाओं से प्रभावित गांव यही बुरी कहानी कहते हैं।

मार्च 2012 में हिमाचल प्रदेश सरकार ने पूरे राज्य में वन अधिकार अधिनियम 2006, लागू किये जाने की घोषणा की। इसके बाद से कुल्लू और मंडी की लुहरी परियोजना प्रभाव क्षेत्र में आने वाली अधिकतर ग्राम सभाओं ने औपचारिक रूप से इस परियोजना का विरोध व्यक्त किया। उन्होंने वन अधिकार अधिनियम, 2006 के अंतर्गत अपनी ग्राम सभाओं में लुहरी परियोजना के सुरंग वाले प्रारूप के लिए अपने वन क्षेत्र के उपयोग की अनुमति देने से इंकार कर दिया। कुल्लू की बैहना पंचायत, मंडी की नांज और तेब्बन पंचायतों ने तो अपने वन क्षेत्र में चल रहे परियोजना संबंधित जांच कार्य को भी रोक दिया। ठेकेदारों को बता दिया कि जब वे यह परियोजना चाहते ही नहीं, तो जांच किस बात की!

ग्राम सभाओं के विरोध के बावजूद स्थानीय प्रशासन ने कई ग्राम पंचायतों पर लुहरी परियोजना को एनओसी दिए जाने के लिए दबाव भी बनाने की कोशिश की। परलोग पंचायत के प्रधान हेम राज ने बताया कि मंडी ज़िले की ग्राम सभाओं वाले दिन सतलुज जल विद्युत निगम के अधिकारी गांव पहुंचे और एसडीएम ने पंचायत सचिव पर एनओसी पास करने का दबाव डाला।

इसी संदर्भ में सतलुज बचाओ जन संघर्ष समिति, ज़िला मंडी के सदस्यों ने मुख्यमंत्री के करसोग दौरे के दौरान स्थानीय प्रशासन की और उन्हें अपना ज्ञापन सौंपा। ज्ञापन में कड़े शब्दों में कहा गया है कि लुहरी परियोजना के सुरंग प्रभावों का आंकलन करवाया जाए और इससे पहले प्रदेश सरकार लुहरी परियोजना को किसी भी प्रकार की स्वीकृति न दे।

दिल्ली स्थित साउथ एशिया नेटवर्क ऑन डैम्स, रिवर्स ऐंड पीपल के हिमांशु ठक्कर का कहना है कि अभी विश्व बैंक को लुहरी परियाजना की पर्यावर्णीय व सामाजिक आंकलन रिपोर्ट भी जमा नहीं की गई है। और न ही विश्व बैंक ने परियोजना को आर्थिक सहयोग देने के विषय में कोई फैसला ही लिया है। भारतीय कानूनों के अंतर्गत परियोजना को अभी वन एवं पर्यावर्णीय स्वीकृतियां भी नहीं मिली हैं। तो फिर आखिर क्या कारण है कि सतलुज जल विद्युत निगम व स्थानीय प्रशासन ग्राम सभाओं पर एनओसी देने का दबाव बना रहे हैं।

देश व राज्य के पर्यावरणविदों ने लुहरी परियोजना के भीषण प्रभाव की संभावनाएं जतायी हैं, जिसमें प्रमुख हैं – विश्व की सबसे लंबी दोहरी सुरंगों के निर्माण और सतलुज नदी के आखिरी बहते अंश के लुप्त हो जाने के कारण होने वाले पर्यावर्णीय व आजीविका संबंधी प्रभाव। तो क्या सतलुज जल विद्युत निगम ने मान लिया है कि इन सब कमियों के बावजूद उन्हें पर्यावरण एवं वन स्वीकृतियां मिल ही जाएंगी? एसजेवीएनएल ने हाल में घोषणा की थी कि वह सतलुज पर क्यूम्यूलेटिव इम्पैक्ट असैसमैंट करवायेगा।

हिमधरा, पालमपुर की मान्शी आशर का कहना है, ''हम काफ़ी समय से मांग कर रहे हैं कि सतलुज नदी पर कोई भी नई परियोजना बनाने से पहले उसकी भार क्षमता का आंकलन किया जाना चाहिए, क्योंकि इस नदी पर 30 से अधिक जल विद्युत परियोजनाएं प्रस्तावित हैं या निर्माण के विभिन्न चरणों में हैं।

सतलुज बचाओ जन संघर्ष समिति के प्रधान दयाल सिंह वर्मा का कहना है, ''लुहरी परियोजना को सभी मंजूरियां मिलने और परियोजना दस्तावेज़ों के अंतिम प्रारूप जमा करने से पहले, एसजेवीएनएल द्वारा एनओसी के लिए ऐसा दबाव बनाना और भूमि अधिग्रहण करना पूरी तरह से नाजायज़ है।''

जनद्रोही कानूनों और राज्य दमन के ख़िलाफ लखनऊ में सात दिवसीय साझा दस्तक

जनद्रोही कानूनों और राज्य दमन के खिलाफ दखल, लखनऊ की पहल पर भारत छोड़ो आंदोलन की 70वीं सालगिरह, 9 अगस्त से 65वें स्वाधीनता दिवस, 15 अगस्त 2012 तक लखनऊ में सात दिवसीय साझा दस्तक का आयोजन किया गया। इस दौरान अभियान के इस परचे का व्यापक वितरण हुआ जिसने जन संवाद का दरवाजा खोलने का काम किया;

इकबालिया बयान

पूरे होशो–हवास में और बिना किसी दबाव के हम एलान करते हैं कि हां, हम भी देशद्रोही हैं और हमें इस पर गर्व है। सरकार चाहे तो हमें गिरफ्तार करे, जेल में ठूंसें, मुकदमा ठोंके और जज साहेबान बामशक्कत उम्र कैद की सजा सुनायें।

साथियों,

हम सफाई नहीं देना चाहते। जिरह करना चाहते हैं कि यह देश आखिर किसका है? कारपोरेट घरानों का, बिल्डरों का, थैलीशाहों का, सेज के शहंशाहों का, मुनाफे के लुटेरों का, माफिया और बिचौलियों का, संसद और विधानसभाओं में कांव–कांव करनेवालों का, नकली मुद्दों पर आग लगानेवालों का... अपराध, उद्योग और राजनीति के नापाक गठबंधन का, बाजार की दादागिरी का? या कि देश के आम नागरिकों का जिनके सामने जीने का संकट दिनोंदिन गहराता जा रहा है? शर्म की बात है कि आजादी के 64 बरस गुजर गये लेकिन देश की मेहनतकश जनता को दुख–मुसीबतों और अभावों की गठरी से आजादी नहीं मिल सकी। नाइनसाफी का पहाड़ और ऊंचा हो गया, गैर बराबरी की खाई और चौड़ी हो गयी।

दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र में इतना अधिक विकास हुआ कि मछलियां बूंद–बूंद को तरसें और मगरमच्छ भरा समुंदर पी जायें, कि बस्ती–बस्ती आफत बरसे और महलों की रौनक बढ़ जाये। यह निजीकरण, उदारीकरण उर्फ लूट के खगोलीकरण का नतीजा है– लोकतंत्र और मानवता की हत्या है, अधर्म और महापाप है।

गुलाम भारत में बिरसा मुंडा और भगत सिंह सरीखे क्रांतिवीरों को, कला और कलम के निर्भीक सिपाहियों को और यहां तक कि गांधीजी जैसे अहिंसा के पुजारियों को भी देशद्रोही होने का तमगा मिला था। आजाद हिंदुस्तान में भी यह सिलसिला बदस्तूर जारी है। जो जनता पर निशाना साध रही नीतियों और योजनाओं की मक्कारियों को नंगा करे, सच बोले, इनसाफ की तरफदारी करे, देश की इज्जत–आबरू को लुटने से बचाने की कसम खाये– राजद्रोही उर्फ देशद्रोही कहलाये। जो विकास के देवताओं पर अपनी धरती, नदी, पहाड़ और जंगल को, कुदरत के बेशकीमती खजाने को, अपनी आजीविका, आत्मनिर्भरता, परिवेश, संस्कृति और स्वाभिमान को न्यौछावर करने से इनकार करे– विकास का दुश्मन उर्फ माओवादी कहलाये, देश की सुरक्षा के लिए सबसे बड़ा खतरा हो जाये।

मशहूर कवि रघुवीर सहाय की पंक्तियां हैं 'राष्ट्रहान में भला कौन वह भारत भाग्य विधाता है? डरा हुआ मन बेमन जिसका बाजा रोज बजाता है।' भारत भाग्य विधाता कई भेस में है– हिंदुस्तान के बाहर भी है, अमरीका और इजरायल में भी है। वह विकास का मसीहा है, इतना बड़ा देशभक्त है कि हर कीमत पर हिंदुस्तान को महाबली देशों की जमात में शामिल कराने पर आमादा है। वह आतंकवाद का शोर मचा कर, सभ्यताओं के संघर्ष का बिगुल बजा कर लूट का अश्वमेघ यज्ञ कराता है। उसे सरहदों की हिफाजत की चिंता है, देशवासियों के जीवन की नहीं।

सीमा आजाद और उनके पति विश्वविजय का यह संगीन जुर्म था कि उन्होंने इस बदसूरत, फूहड़ और अश्लील तसवीर को बदलने की ठानी। कलम थामी और संघर्ष की राह चुनी। हजारों लोगों को उजाड़नेवाली गंगा एक्सप्रेस वे जैसी परियोजनाओं और अपनी ही जनता के खिलाफ युद्ध का मोर्चा खोलने जैसे सरकारी धतकरमों को कटघरे में खड़ा करने की जुर्रत की। यह खतरनाक काम उनके माओवादी होने का पक्का सबूत बना। ढाई साल पहले दोनों कानून के हत्थे चढ़े, सीधे जेल पहुंचे और गुजरी 8 जून को निचली अदालत ने उन्हें उम्र कैद की सजा सुना दी। राहत की बात है कि 6 अगस्त को जमानत पर उनकी रिहाई हो चुकी है लेकिन याद रहे कि अभी जोकरी इल्जामों से रिहाई बाकी है। यह अकेला मामला नहीं है। आज हिंदुस्तान की जेलें ऐसे हजारों कैदियों से आबाद हैं जिन्होंने जुबान खोलने का गुनाह किया। अपना भारत महान– जय हे, जय हे,

भारत भाग्य विधाता...

तो गिरफ्तारी, मुकदमा, जेल उन सिरफिरों को सबक सिखाने के लिए है जो झूठी आजादी से देश और देश के लोगों की रिहाई चाहते हैं। समझदारी की अलख जगाते हैं कि घुट–घुट कर मरने से तो अच्छी है लड़ाई... सबके साथ, सबके भले के लिए। यह लड़ाई आसान नहीं– शिकायत और सुनवाई के तमाम संवैधानिक रास्तों की नाकेबंदी है। फरमान है कि उफ न करो, नजर झुका के चलो, हदों में रहो। वरना भुगतो, कानून का बेरहम डंडा झेलो। यह शर्मनाक है कि विलायती हुकूमत की यह जालिमाना विरासत आजाद हिंदुस्तान में भी बाअदब जारी है बल्कि और जहरीली हो गयी है। अदालतें बेचारी क्या करें? कानून तो शहंशाहों का चलता है।

आजादी और जम्हूरियत को घायल करनेवाले, सच को सजा और झूठ को बाइज्जत बरी करनेवाले, इनसाफ की आवाजों को बेड़ियों में जकड़ने और गिद्ध इरादों को पूरा आसमान सौंप देनेवाले ऐसे बेहया, भ्रष्ट और शातिर कानूनों पर हमारी हजार बार आक्थू–आक्थू... ।

यह समय की मांग है कि हम बेहतर भविष्य का साझा सपना बुनें, चुप्पी तोड़ें और गर्व से कहें कि सच की पैरवी करना, दुखियारों के साथ खड़े होना, इनसानी हैसियत में और अपनी हंसी–खुशी से जीने का अधिकार मांगना अगर देशद्रोह है तो बेशक, हम भी देशद्रोही हैं। सच्चे हिंदुस्तानी का यही धर्म है– देश के जिम्मेदार नागरिक होने का यही तकाजा है, बदहालियों को अंगूठा दिखाने का यही रास्ता है, अंधेरा मिटाने का यही अचूक मंत्र है।

आपसे अपील है कि कार्यक्रम के हमसफर बनें, इस परचे को जन–जन तक पहुंचायें और मिल कर आवाज उठायें कि–

देशभक्ति का स्वांग बंद करो, जनद्रोही कानून रद्द करो

पिंजरा खोलो, जनता को आजादी दो

साझीदार– काला कानून एवं दमन विरोधी मंच, सीमा–विश्व. विजय रिहाई मंच, अमुक आर्टिस्ट ग्रुप, भारतीय जन संसद, इंडियन वर्कर्स कौंसिल, इनसानी बिरादरी, जन संस्कृति मंच, क्रांतिकारी सांस्कृतिक मंच, मजदूर परिषद

करछना आंदोलन : जमीन न देने का संकल्प

पिछले 22 अगस्त को इलाहाबाद की करछना तहसील में किसान महापंचायत का आयोजन हुआ। यह आंदोलन 10 गांवों के किसानों द्वारा किये जा रहे भूमि अधिग्रहण विरोध आंदोलन के दो साल पूरा होने पर किया गया। यह आंदोलन करछना पावर प्लांट के लिए गांव की करीब 800 एकड़ जमीन के अधिग्रहण के विरोध में चलाया जा रहा है।

यहां कुल 1920 किसानों की जमीन अधिग्रहीत की गयी थी। मुआवजा तय हुआ था तीन लाख रुपये प्रति बीघा। अधिकतर ने मुआवजा स्वीकार कर लिया लेकिन 70 किसानों ने उसे लेने से इंकार कर दिया। अधिग्रहण के खिलाफ उनका आंदोलन जारी रहा। मामला आखिरकार उच्च न्यायालय पहुंचा जहां 13 अप्रैल को अधिग्रहण रद्द करने का फैसला हुआ।

इस फैसले से प्रशासन फंस गया है। जो कभी जमीन लेने और मुआवजा देने के लिए उतावला था, अब पूछ रहा है कि कौन–कौन अपनी जमीन वापस चाहता है। बस इसके लिए उन्हें मुआवजा वापस करना होगा। अब उन किसानों को भी लग रहा है कि मुआवजा लेकर अपनी जमीन को सरकार के हवाले कर उन्होंने बहुत बड़ी गलती की थी। खेती से यह औसतन एक लाख रुपये प्रति बीघा हर साल कमा लेते थे। अधिग्रहण को चार साल पूरे हो गये यानी तब से अब तक उनका प्रति बीघा चार लाख रुपयों का नुकसान हो चुका है। कई पर अभी तक मुकदमे चल रहे हैं।

अदालती फैसले के बाद आंदोलन सुस्त पड़ गया था। जैसा कि फैसले में कहा गया था इसलिए अधिग्रहण के लिए नये सिरे से प्रक्रिया शुरू की जा सकती है। इसके बाद से कंपनी के गुलाम कारिंदे और दलाल सरकारी तंत्र के साथ मिल कर किसानों को बरगलाने के अभियान में जुट गये।

किसान महा पंचायत में दस गांवों के अलावा दर्जनों दूसरे गांव के लोग भी शामिल हुए। इनमें महिलाओं की संख्या अच्छी–खासी थी। किसानों ने तय किया कि आंदोलन को जारी रखा जाये और नये सिरे से अधिग्रहण की प्रक्रिया का मुंह तोड़ जवाब देने की तैयारी की जाये। महा पंचायत में जन संघर्ष समिति, किसान मोर्चा, कृषि भूमि बचाओ मोर्चा, भारतीय किसान मजदूर सभा, भारतीय किसान यूनियन, बिहान मंच जैसे कई संगठनों ने भागीदारी की।

– रविंद्र

हरियाणा में परमाणु ऊर्जा के विरोध में जय जवान, जय किसान

मैंने हरियाणा के फतेहाबाद का दौरा किया जहां गोरखपुर गांव के नाम से प्रस्तावित परमाणु संयंत्र की परियोजना के विरोध में पिछले दो सालों से उठ रही आवाजें लगातार तेज हुई हैं। इलाके के आंदोलित गांववालों व उनके समर्थकों से भी बात की। प्रस्तावित परियोजना में शामिल होने जा रहे हरित और उपजाऊ खेतों को भी देखा और भाखड़ा कैनाल को भी देखा।

अजब तमाशा है कि विकास के नाम पर हजारों लोग अपनी आजीविका से हाथ धो बैठते हैं। जमीन छिनती है तो उसकी मार केवल किसानों को ही नहीं, खेतिहर मजदूरों और खेती से संबंधित उद्योग–धंधों से जुड़े लोगों पर भी पड़ती है। कहने की आवश्यकता नहीं कि इस विकास में उजाड़े गये लोगों के लिए लगभग कोई जगह नहीं होती।

इसीलिए परियोजना के प्रस्ताव को लेकर आयोजित की गयी जन सुनवाई को तीखे विरोध का सामना करना पड़ा। नौबत यहां तक आयी कि संबंधित अधिकारियों को गांव से भागना पड़ा।

उस दिन 17 जुलाई 2012 को गोरखपुर गांव छावनी में बदल दिया गया। गांव के अंदर और बाहर भारी संख्या में पुलिस और अर्द्धसैनिक बल तैनात कर दिये गये। धारा 144 लागू हो गयी। आंसू गैस के गोलों से लैस दंगा नियंत्रण वाहनों ने पोजीशन ले ली। खेल के मैदान को कंटीले तारों से घेर दिया गया।

गोरखपुर परमाणु संयंत्र की परियोजना को लेकर आयोजित तथाकथित जन सुनवाई का मंच कुछ इस तरह सजाया गया। मनमानी से भरे अब तक के सरकारी रवैये से लोग बहुत नाराज थे। इस घेराबंदी ने उनके गुस्से को और भड़का दिया। यह तगड़ी व्यवस्था लोगों को डराने के लिए थी लेकिन कोई काम न आयी। उस दिन सुबह 11 बजे करीब आठ हजार लोग खेल के मैदान में जमा हो गये, जहां जन सुनवाई के 'सरकारी खेल' का आयोजन होना था।

बहरहाल, जन सुनवाई का नाटक शुरू हुआ। एनपीसीआइएल और जिला प्रशासन ने प्रस्तावित परियोजना के उजले पक्षों को गिनाते हुए उसे लोगों और देश के लिए लाभप्रद बताना शुरू किया लेकिन लोग उन्हें सुनने के लिए तैयार नहीं थे। किसान संघर्ष समिति के हंसराज सिवाच, डॉ. राजेंद्र शर्मा और आजादी बचाओ आंदोलन के डॉ. बनवारी लाल शर्मा के मुश्किल सवालों के जवाब में परियोजना के पैरोकार बगलें झांकने लगे।

नारों का शोर माइक पर भारी पड़ा। अभी जन सुनवाई को शुरू हुए चालीस मिनट गुजरे थे कि आगे की कार्रवाई मजबूरन रोक देनी पड़ी। यह जन शक्ति की जीत थी, हालांकि डिप्टी कमिश्नर एम.एल. कौशिक ने सरकारी हार पर परदा डालते हुए कहा कि विरोधी दलों के उकसावे पर लोग भड़के और ऐसे में हिंसा की आशंका को देखते हुए जन सुनवाई बीच में रोकनी पड़ी।

जन सुनवाई प्रस्तावित परियोजना के पर्यावरणीय प्रभावों के मूल्यांकन पर बहस के लिए रखी गयी थी। कायदे से इसके लिए जरूरी रिपोर्ट को एक माह पहले आम लोगों से साझा किया जाना चाहिए था और यह भी स्थानीय भाषा में। लेकिन संबंधित अधिकारियों ने इसकी कोई जरूरत नहीं समझी। परियोजना के मुखर विरोध ने जन सुनवाई को रुकवा कर इसे अच्छी तरह समझाने का भी काम किया। यह अलग बात है कि जनता द्वारा दिये गये इस तरह के सबक को हमारी सरकारें ज्यादा दिन याद नहीं रख पाती।

यहां भी यही हुआ। जन सुनवाई के पूरा न हो पाने की डिप्टी कमिश्नर की स्वीकारोक्ति के बावजूद जिला प्रशासन ने यह घोषणा करने में देर नहीं कि जन सुनवाई सफल रही और मुआवजा राशि तय हो गयी। इससे लोग और भड़के। बडोपल और फाजलहेड़ी के किसानों ने मुआवजा लेने से इन्कार करते हुए भाखड़ा कैनाल के पास विरोध प्रदर्शन शुरू कर दिया। फिलहाल, प्रशासन लोगों के बीच फूट डाल कर और उन्हें आपस में भिड़वा कर अपना रास्ता साफ करने की योजना पर अमल कर रहा है।

इसी कड़ी में हरियाणा सरकार सभी तरह की जमीनों के लिए 34 लाख रुपये प्रति एकड़ मुआवजा दिये जाने की घोषणा कर चुकी है। ताजा स्थिति यह है कि 40 प्रतिशत किसान मुआवजा स्वीकार कर चुके हैं। लेकिन बाकी कहीं और अधिक मजबूती से डटे हुए हैं। कोई डेढ़ दर्जन गांव के लोग भी इस मोर्चे में शामिल हो गये हैं जो अधिग्रहण क्षेत्र से बाहर बसे हैं। भले ही उनकी जमीन नहीं छिनेगी लेकिन उन्हें लगने लगा है कि परियोजना के आने से वे

उसके बुरे नतीजों से नहीं बच सकेंगे। मतलब कि आंदोलन में अभी और उबाल आना बाकी है।

किसान संघर्ष समिति के साथी डा. राजेन्द्र शर्मा कहते हैं कि 'अपने ही नियमों और कानूनों का उल्लंघन सरकार की आदत बन गयी है। परमाणु ऊर्जा नियंत्रण बोर्ड के मानकों जैसे– पांच किलोमीटर तक प्राकृतिक जंगल होना, 10 किलोमीटर तक 10 हजार की आबादी होना तथा 30 किलोमीटर तक 1 लाख की जनसंख्या होना आदि का भी उल्लंघन हुआ है। परमाणु संयंत्र जहां लगाया जाना है, उसके 5 किलोमीटर के दायरे में 5 लाख से अधिक आबादी है और काजलहेड़ी गांव के पास ही 400 से अधिक काले हिरण हैं। संयंत्र क्षेत्र का पूरा पानी निचोड़ लेगा, जिससे आसपास की सारी भूमि बंजर हो जायेगी।'

ज्ञात रहे कि गोरखपुर परमाणु परियोजना 2800 मैगावाट की है। क्षेत्र में पानी का एकमात्र साधन भाखड़ा कैनाल की फतेहाबाद ब्रांच है, और उसी के पास यह परियोजना लगाने की योजना है। इस नहर पर लाखों किसानों का जीवन निर्भर है। यह नहर 1956 में खेती के लिए बनाई गई थी। लेकिन 2800 मेगावाट की यह परियोजना बहुफसली खेती का सत्यानाश करेगी और पूरे इलाके को कहीं का न छोड़ेगी।

संयंत्र 1503 एकड़ में लगेगा। गोरखपुर व कुम्हारिया के बीच संयंत्र स्थापित करने की अधिसूचना अगस्त 2010 में जारी की गई थी। इसके लिए करीब 1503 एकड़ जमीन का अधिग्रहण किया जाना है जिसमें केवल गोरखपुर गांव की 1313 एकड़ जमीन शामिल है।

परियोजना का विरोध भूमि अधिग्रहण और विस्थापन के साथ–साथ परमाणु विकिरण की वजह से भी किया जा रहा है। फुकुशिमा हादसे के बाद परमाणु ऊर्जा को लेकर कई देशों ने अपनी परियोजनाएं रोक दी हैं। सामान्य स्थिति में भी परमाणु विकिरण जारी रहता है और आसपास के इलाके में रहने वाले लोगों के स्वास्थ्य पर बुरा असर डालता है और उनके लिए पर्याप्त चिकित्सा सुविधाएं भी मुहैया नहीं हैं।

परमाणु ऊर्जा पर्यावरण, सामाजिक प्रभाव की कीमत, परमाणु कचरे का निपटान आदि छिपी हुई कीमत पर गौर करें तो यह बहुत महंगी साबित होती है। परमाणु ऊर्जा को आर्थिक स्तर पर मुश्किल से ही न्यायोचित ठहराया जा सकता है। इस प्रकार के 'विनाशकारी विकास' से बचा जाना चाहिए। गोरखपुर समेत सभी परमाणु ऊर्जा परियोजनाओं पर तुरंत रोक लगायी जानी चाहिए। लोगों के जीवन से जुड़े संदर्भों को नजरअंदाज करना कहीं से भी ठीक नहीं।

– सुंदरम

मध्य प्रदेश

चुटका परमाणु बिजली संयंत्र विरोधी आंदोलन

संघर्ष की राह बहुत पथरीली है...

मंडला जिले की हरी–भरी धरती के सुदूर इलाके में छोटा सा आदिवासी गांव है– चुटका। तीन साल पहले तक नारायनगंज तहसील में ही इसे बहुत कम लोग जानते थे। आज यह गांव मंडला में ही नहीं, पूरे मध्य प्रदेश में जाना जाता है। राज्य के बाहर भी यह नाम यहां–वहां लोगों की जुबान पर चढ़ने लगा है। उसकी इस शोहरत के पीछे कोई चमत्कारिक उपलब्धि नहीं है। सामने खड़ी पहाड़ जैसी आफत ने उसे सुर्खियों में लाने का काम किया है। यह आफत परमाणु बिजली संयंत्र की प्रस्तावित परियोजना लेकर आयी है।

परियोजना के निशाने पर अकेला चुटका नहीं है। उसके साथ दो पड़ोसी गांव भी परियोजना की बलिवेदी पर चढ़ेंगे। विकास नाम के इस पगलाये यज्ञ में दी जानेवाली आहुतियों का सिलसिला यहीं पर नहीं थमेगा। उसकी आंच से दर्जनों दूसरे गांव भी स्वाहा हो जाने की हद तक झुलसेंगे। जाहिर है कि पिछले तीन सालों से लगातार तेज हो रही इस आफत की आहट ने इलाके के अमन–चौन को लूटने का बेहूदा काम किया है। सच है कि तमाम लोग डरे हुए हैं और उन्हें नहीं नहीं लगता कि उनकी सुनी जायेगी। लेकिन यह सच कहीं ज्यादा वजनी है कि बहुतेरे इसके खिलाफ डटे हुए हैं और आखिरी दम तक लोहा लेने को तैयार हैं।

और अब, जमीन के अधिग्रहण की अधिसूचना ने इसमें और गरमाहट घोल दी है। धारा–4 की यह नोटिस पिछली 29 जून को जारी हुई थी लेकिन इतनी धीमी रफ्तार से चली कि गांव तक पहुंचने में उसे 23 जुलाई की रात हो गयी। यह देरी सरकारी मक्कारी का नमूना है। खैर, इसके अगले

ही दिन आंदोलनकारियों का प्रतिनिधि मंडल जिला कलेक्टर से मिला। पूछा कि जब ग्राम सभाएं परियोजना को नामंजूर करते हुए उसके खिलाफ अपनी आपत्तियां दर्ज कर चुकी हैं तो यह नोटिस क्यों, कि यह तो पांचवीं अनुसूची के प्रावधानों का सरासर उल्लंघन है।

यों, इस नीतिगत मसले पर कलेक्टर से जवाब की कोई उम्मीद भी नहीं थी। 16 अगस्त को यही बात राज्यपाल के सामने भी रखी गयी और हाथ लगा बस वही पुराना जुमला और वो भी बहुत ठंडे सुर में कि उनकी मांगों पर संजीदगी के साथ विचार किया जायेगा। तसवीर साफ हो गयी कि लड़ना लाजमी है। इसी रोशनी में 19 अगस्त को 54 गांव के प्रतिनिधि चुटका में जुटे और उन्होंने सरकारी जिद और जबरदस्ती के आगे घुटने न टेकने का संकल्प दोहराया कि जान देंगे लेकिन जमीन नहीं। अभी इस आग को शोला बनाया जाना बाकी है।

परमाणु संयंत्र बरगी बांध के किनारे जमेगा। याद रहे कि बरगी बांध नर्मदा घाटी में बने 30 बड़े बांधों में से एक है और केवल बरगी बांध से मध्य प्रदेश के तीन जिलों के 162 गांवों के लोग विस्थापित हुए थे— मंडला के 95, सिवनी के 48 और जबलपुर के 19 गांव। यह भी याद रहे कि विस्थापितों में 70 फीसदी से अधिक आदिवासी हैं, कि विस्थापित हुए लोग अभी तक विस्थापन की त्रासदी से उबर नहीं सके हैं। मुआवजे और पुनर्वास को लेकर किसी पारदर्शी और न्यायसंगत नीति की गैर मौजूदगी में बरगी बांध ने उनके साथ जालिमाना मजाक किया। विकास का जाप करते हुए उनकी सिधाई के साथ छल किया और उन्हें वं. चनाओं के जंगल में फेंक दिया।

बरगी बांध को रानी अवन्ती बाई लोधी सागर परियोजना के नाम से बनाया गया था। इसी कड़ी में इतिहास का वह पन्ना भी याद रहे कि रानी अवन्ती बाई ने अपने पति की मौत के बाद अंग्रेजों के खिलाफ जंग लड़ी थी और इसके लिए 25 हजार से अधिक सिपाहियों की फौज तैयार की थी। चार साल तक चली यह जंग गोरी हुकूमत द्वारा छीनी गयी लोधी साम्राज्य की जमीन की वापसी के लिए थी। लेकिन उसका अंत दुखद निकला। चौतरफा घिर जाने के बाद रानी अवन्ती बाई ने अंग्रेजों के हत्थे चढ़ने के बजाय मौत को गले लगाने का फैसला किया और अपनी तलवार से खुद को कुर्बान कर दिया। इसी के साथ लोधी साम्राज्य का सूरज भी हमेशा के लिए डूब गया। रानी अवन्ती बाई की पराजय गोरी हुकूमत की फौजी ताकत से कहीं ज्यादा उसकी 'फूट डालो और राज करो' की नीति का नतीजा थी।

खैर, जबलपुर से कोई पैंतालीस किलोमीटर दूर बसा बरगी कभी हरदुली ग्राम पंचायत का मामूली गांव था। कोई तीन किलोमीटर दूर बने बरगी बांध ने इसकी तसवीर बदल दी और उसे नया नाम मिला— बरगीनगर। आज यहां सिंचाई विभाग का गेस्ट हाउस है, इंटर कालेज है, बड़ा बाजार है। और हां, विस्थापितों की कालोनी भी। बरगी बांध के करीब उम्दा रेस्त्रां भी खुला। आखिर बरगी बांध पर्यटक स्थल जो है। यहां सेवा में बहुत कुछ हाजिर है। मंहगी शराब पीजिये और गहरे पानी में स्टीमर पर घूमने का लुत्फ भी उठाइये। शर्त बस इतनी कि जेब में दमड़ी हो।

यहां बरगी बांध पर दो पन बिजलीघर भी हैं। यह अलग बात है कि उसके आसपास का इलाका चराग तले अंधेरा की पुरानी कहावत का नमूना पेश करता है। बिजली का यहां कोई ठिकाना नहीं रहता। और क्यों रहे? बिजलीघर आदिवासियों के घरों को रौशन करने के लिए तो बना नहीं। खुद बरगीनगर के गरीब वाशिंदे बिजली के सुख से बाहर हैं।

बहरहाल, चुटका परमाणु बिजली संयंत्र की परियोजना पर वापस लौटें। परियोजना का खाका 1984 से ही बनना शुरू हो गया था जब परमाणु ऊर्जा आयोग के विशेष दल ने चुटका के आसपास के इलाके का दौरा किया। तब बरगी बांध से हुए विस्थापन का मुद्दा ताजा और गरम था। शायद इसीलिए गांववाले नहीं सूंघ सके कि एक और आफत उन पर घात लगाने की तैयारी में है।

कोई 25 साल बाद इसके खिलाफ हलचल तब शुरू हुई जब अक्तूबर 2009 में केंद्र सरकार ने इसके प्रस्ताव को हरी झंडी दिखा दी। परियोजना के मुताबिक पहले दौर में संयत्र की दो इकाइयां लगेंगी और प्रति इकाई सात सौ मेगावाट बिजली का उत्पादन होगा। जल्द ही दो और इकाइयां लगा कर परियोजना का विस्तार किया जायेगा। इस तरह चुटका परमाणु बिजली संयंत्र की उत्पादन क्षमता 28 सौ मेगावाट हो जायेगी।

परियोजना के लिए चुटका, टाटीघाट और कुंडा गांव की 650 हेक्टेयर जमीन का अधिग्रहण होगा। परियोजना से सात किलोमीटर दूर बसे सिमरिया गांव के पास टाउनशिप

का निर्माण होगा और इसके लिए 75 हेक्टयर अतिरिक्त जमीन का अधिग्रहण होगा।

परियोजना को केंद्र सरकार की हरी झंडी मिलने के फौरन बाद नवंबर 2009 में चुटका में आसपास के 50 गांवों की बड़ी सभा का आयोजन हुआ था। तब तक यह खबर आग की तरह दूर–दूर तक फैल चुकी थी कि परमाणु बिजली संयंत्र का इलाके पर बुरा असर पड़ेगा, कि सैकड़ों परिवार अपनी आजीविका से हाथ धो बैठेंगे, कि बरगी बांध से विस्थापित हो चुके कुछ गांव दोबारा विस्थापन की मार झेलेंगे। इससे सभी सकपकाये हुए थे और गुस्से में थे।

उस सभा में मंडला के सांसद बसोरी सिंह मसराम भी पहुंचे थे। अब इसे संसदीय राजनीति की विडंबना कहें कि जन प्रतिनिधि महोदय के सुर जनमत से ठीक उलट थे। उन्होंने विकास की दुहाई दी, बेहतर मुवावजे और पुनर्वास का झुनझुना हिलाया। लेकिन जैसा कि तय था, सांसद महोदय की दाल नहीं गली। उनका सामना लोगों के तीखे विरोध से हुआ और उन्हें बैरंग लौटना पड़ा। दूसरी ओर सभा ने एकमत से प्रस्तावित परियोजना पर अपनी नामंजूरी दर्ज की। संघर्ष के संचालन के लिए चुटका परमाणु संघर्ष समिति का भी गठन किया गया।

यह सभा जन संघर्ष का बिगुल थी। उसी माह संघर्ष समिति ने मंडला के कलेक्टर से भेंट कर परियोजना के बारे में पूछताछ की। लेकिन कलेक्टर ने परियोजना के बावत कोई जानकारी होने से ही इनकार कर दिया। कहा कि यह आदिवासी क्षेत्र पांचवीं अनुसूची में आता है, कि पेसा कानून के तहत गांव सभा की मंजूरी के बगैर कोई परियोजना लागू नहीं की जा सकती, कि इसलिए निश्चिंत रहें। चलते–चलते उन्होंने बाहरी लोगों के बहकावे में न आने की सीख भी दी। लेकिन कलेक्टर का आश्वासन ही बहकावा था। इसका खुलासा भी बहुत जल्द हो गया जब 20 नवंबर 2009 को टाटीघाट में सर्वे की टीम आ पहुंची। गांव की महिलाओं ने खदेड़ा तो टीम चुटका जा पहुंची लेकिन वहां की महिलाओं ने भी उसे घेर लिया।

गांववालों के तीखे प्रतिरोध को देखते हुए सर्वे टीम ने परियोजना को लेकर अधिकारियों के साथ खुली बातचीत की पेशकश रखी। बातचीत के लिए अगले दिन की तारीख तय हुई लेकिन उस दिन कोई सरकारी अधिकारी नहीं पहुंचा। तहसीलदार से जब इस बावत फोन पर बातचीत हुई तो जवाब मिला कि आप लोग (चुटका परमाणु संघर्ष समिति) हमें ताकत का इस्तेमाल करने का मौका न दें।

तहसीलदार के इस बर्ताव से नाखुश होकर आंदोलनकारियों ने उसी समय एसडीएम को फोन किया और तहसीलदार के खिलाफ शिकायत दर्ज की। एसडीएम ने पूरे मसले पर चर्चा करने के लिए तीसरे दिन का समय दिया। उस दिन 38 गांव के दो हजार से अधिक लोग जमा हुए। तहसीलदार ने आंदोलन के नेताओं को जेल में ठूंस देने की धमकी दी तो एसडीएम ने भी उन पर शासकीय काम में बाधा डालने का आरोप मढ़ा। लेकिन गांववाले इस धौंसपट्टी के आगे नहीं झुके और अपना फैसला सुना दिया कि अब बात होगी तो केवल कलेक्टर से, और तब तक सर्वे भी नहीं होने दिया जायेगा।

अब कलेक्टर को परखने की बारी थी। इसी कड़ी में अगले माह, दिसंबर 2009 में, एक बार फिर चौपाल लगी। कलेक्टर और एसपी समेत पूरा सरकारी अमला चुटका पहुंचा। जिस कलेक्टर ने कानून का हवाला देकर गांववालों को भरोसा दिलाया था कि ग्राम सभा की अनुमति के बगैर कोई परियोजना लागू नहीं की जा सकती, उसी कलेक्टर ने परियोजना की तरफदारी करते हुए सर्वे में रूकावट न डालने की अपील की।

आंदोलनकारियों ने सवाल जड़ा कि जब गांववाले परियोजना के पक्ष में ही नहीं तो सर्वे क्यों? उन्हें याद दिलाया गया कि इसी तरह बरगी बांध को भी जन हितकारी परियोजना के बतौर प्रचारित किया गया था। कहा गया था कि उससे प्रभावित लोगों को वैकल्पिक जमीन मिलेगी, नौकरी और मुफ्त बिजली मिलेगी, बेहतर जिंदगी जीने की तमाम सरक. ारी सहूलियतें मिलेंगी, उनकी किस्मत बदल जायेगी। बरगी बांध तो बन गया लेकिन मिला कुछ भी नहीं। बरगी बांध से बिजली बन रही है लेकिन हमारे घरों में आज भी कुप्पी जलती है। क्या यही विकास है?

इस गरमाते माहौल को और आंच मिली जब कलेक्टर ने इन सवालों से तिलमिला कर 'बाहरी' लोगों को सभा से निकल जाने का फरमान सुनाया। उनका इशारा बरगी बांध विस्थापित एवं प्रभावित संघ के नेताओं के अलावा परमाणु बिजली परियोजना से 'अप्रभावित' रहनेवाले गांव के लोगों से था।

इस पर नयी बहस छिड़ी कि आखिर 'बाहरी' कौन है? चुटका परमाणु संघर्ष समिति के प्रतिनिधियों ने कहा कि

हमारे लिए तो सबसे पहले प्रस्तावित परियोजना के अधिकारी बाहरी व्यक्ति हैं जो यहां बिन बुलाये मेहमान हैं। खुद परियोजना का आकलन है कि संयंत्र से 11 किलोमीटर के अर्ध व्यास में बसे दर्जनों गांव संभावित विकरण के दायरे में होंगे। परियोजना से भले ही तीन गांव के लोग उजड़ेगे लेकिन और गांव भी उसके बुरे नतीजों को भुगतेंगे। कोई अनहोनी घटी तो पूरा महा कौशल वीरान हो जायेगा।

इस गहमागहमी में जो होना था, वही हुआ। चौपाल उखड़ गयी। सरकारी अमला देख लेने की मुद्रा के साथ आंखें तरेरते हुए गांव से विदा हो गया। अब तक की प्रक्रिया से साफ हो गया कि प्रशासन से कोई उम्मीद रखना बेमानी है, कि प्रशासनिक तंत्र तो सरकारी इरादों को पूरा करने का जरिया भर है, कि परियोजना का फैसला भले ही केंद्र सरकार ने लिया है लेकिन उसमें राज्य सरकार की भी बराबर की रजामंदी है, कि विकास के नाम पर जारी विनाश को रोकने के लिए जन संघर्ष के अलावा दूसरा कोई विकल्प नहीं। आखिर यों ही नहीं कहा जाता कि संघर्ष सबसे बड़ा शिक्षक होता है।

बहरहाल, दिसंबर 2009 में चुटका परमाणु संघर्ष समिति ने परियोजना के खिलाफ मंडला के कलेक्टर को राज्यपाल के नाम संबोधित ज्ञापन सौंपा। फरवरी 2010 को पहले दौर में प्रभावित होने जा रही तीनों ग्राम पंचायतों ने परियोजना के खिलाफ विधिवत प्रस्ताव पारित किया। इसे अनदेखा करते हुए प्रशासन ने अप्रैल 2010 में चुटका में विशेष ग्राम सभा का आयोजन किया। इरादा था परियोजना के पक्ष में जनमत तैयार करना। लेकिन यह सरकारी जुगत काम न आयी। ग्रामीणों ने दोटूक जवाब दिया कि वे अपनी जान दे सकते हैं लेकिन जमीन नहीं।

यह नारा गांव–गांव गूंजा और उसकी आवाज जबलपुर में भी बुलंद हुई। परियोजना के खिलाफ हस्ताक्षर अभियान चला जिसे तत्कालीन केंद्रीय वन एवं पर्यावरण मंत्री जयराम रमेश को ज्ञापन के बतौर भेजा गया। फिलहाल, परियोजना को अभी तक अनापत्ति प्रमाण पत्र नहीं मिला है। इस बीच इलाके का सर्वेक्षण किये जाने की जब–तब कोशिशें जारी रहीं। कहना होगा कि गांववालों और खास कर महिलाओं की सजगता के चलते ऐसी हर कोशिश को केवल नाकामयाबी हाथ लगी।

परियोजना का रास्ता साफ करने के लिए सामाजिक कार्य की आड़ में गांवों में घुसपैठ करने और लोगों को भरमाने का पैंतरा भी आजमाया गया। जबलपुर की सिहोरा तहसील की किसी संस्था को स्वास्थ्य शिविर लगाने का ठेका दिया गया। लेकिन गांववाले भांप गये कि इसका असल मकसद तो कुछ और है। शंका इसलिए भी पैदा हुई कि सरकारी योजना के तहत पहले से ही बरगी बांध से सटे इलाकों में चिकित्सा सुविधा पहुंचाने के लिए हर हफ्ते वाहन और स्टीमर का दौरा लगता है, तब अचानक इस स्वास्थ्य शिविर का आयोजन क्यों? आखिरकार, जागरूक और सतर्क वा. शिंदों के कड़े रूख के सामने संस्था की एक न चली और उसे अपने स्वास्थ्य शिविर का बोरिया–बिस्तर समेट कर वापस लौटना पड़ा।

आंदोलन के प्रतिनिधि मंडल ने राजस्थान में राणा प्रताप सागर नाम से चंबल नदी पर बने बांध के इलाके का दौरा किया जहां रावतभाटा परमाणु बिजली संयंत्र भी है। उसने देखा कि परमाणु बिजलीघर के चलते बांध का पानी दूर तक जामुनी रंग का हो गया है और उससे गंधक–पोटाश जैसी गंध निकलती है। आसपास से मछलियां कब की गायब हो चुकी हैं। खेती–किसानी चौपट होती जा रही है। चौतरफा भूख, गरीबी, कुपोषण का राज है। कुल मिला कर परमाणु बिजलीघर ने इलाके में खुशहाली लाने के दावे के ठीक उलट सामाजिक तानेबाने को तहस–नहस करने, आत्मनिर्भरता की स्थिति और संस्कृति को भी भंग करने और लोगों की जिंदगी को दुश्वारियों के अंधेरे में ढकेलने का का ही काम किया। दौरे से लौट कर इन अनुभवों को साझा किये जाने के कार्यक्रम भी आयोजित हुए।

वैसे, चुटका से कोई दस किलोमीटर दूर बसे गोरखपुर बरेला में तीन साल पहले झाबुवा तापीय बिजली संयंत्र की परियोजना को मंजूरी मिली थी। इसमें कहीं कोई दिक्कत पेश नहीं आयी। सीधे–सादे आदिवासी परियोजना द्वारा दिखाये गये सुनहरे कल के झांसे में आ गये और उन्होंने आगा–पीछा सोचे बगैर परियोजना के पक्ष में हामी भर दी और कौड़ियों के भाव अपनी उपजाऊ जमीनें उसके हवाले कर दीं। संयंत्र अभी निर्माणाधीन है लेकिन समस्याओं की बारिश शुरू हो चुकी है। चट्टानों को विस्फोट से उड़ाया जाता है तो आदिवासियों के घर दहल उठते हैं। ज्यादातर मकानों में दरारें पड़ गयी हैं। धुकधुकी लगी रहती है कभी कोई तगड़ा विस्फोट न हो जाये कि उनका आशियाना भरभरा कर ढह जाये। विस्फोट से उड़नेवाली धूल बचे–खुचे खेतों में पसर जाती है। यह

जमीन को बांझ बना देने का सिलसिला है। गोरखपुर बरेला के लोगों को अब समझ में आया कि उनसे भारी भूल हुई। देर से और बहुत कुछ लुट जाने के बाद ही सही लेकिन वे जाग रहे हैं। चुटका परमाणु संघर्ष समिति के करीब आ रहे हैं। अभी तो खैर शुरूआत है।

थोड़ा पीछे लौटें और विकास के झंडे तले मुनाफे के लुटेरों की बाजीगरी देखें। बरगी बांध बनने से पहले नर्मदा में मछली पकड़ने पर कोई पाबंदी नहीं थी। लेकिन 1984 में बांध बनने के फौरन बाद राज्य मत्स्य महासंघ को मछली पकड़ने का ठेका मिल गया।

यह सरकारी मेहरबानी इसलिए हुई कि महासंघ पर कुछ मुट्ठी भर लोगों का दबदबा है और जिनकी सत्ता के गलियारे में ऊंची पहुंच है। महासंघ को मिले ठेके के जरिये मुनाफे की लूट के लिए स्थानीय मछुवारों को मालिक से दिहाड़ी का मजदूर बना दिया गया। एक झटके में दो हजार से अधिक मछुवारों का परंपरागत अधिकार छिन गया। इसके खिलाफ तीनों जिलों के प्रभावित मछुवारे एकजुट हो गये।

कहते हैं कि दुखियारों को उनके दुख जोड़ते हैं। किसानों ने भी उनका पूरा साथ दिया। भारत जन आंदोलन के प्रणेता बीडी शर्मा भी जुड़े। यह उन्हीं का दिया नारा था कि 'खेती डूबी यहां हमारी, जल की रानी कहां तुम्हारी'। कहना होगा कि इस नारे ने बरगी बांध से विस्थापित हुए किसानों और मछुवारों के बीच एकता को मजबूत करने का बड़ा काम किया।

1994 में तीनों जिलों के प्रभावित मछुवारों ने नौका रैली निकाली। बांध में मछली पकड़ने का जाल डाला और जुलूस बना कर मछली बेचने टिकरिया (मंडला), किनदरोई और धनसौर (सिवनी) और बरगी (जबलपुर) पहुंचे। यह कदम मछली पकड़ने के अधिकार की सार्वजनिक अभिव्यक्ति थी। आखिरकार, बरगी बांध से प्रभावित हुए मछुवारों को इनसाफ मिला। मछुवारों की 54 कोआपरेटिव सोसाइटीज को मछली पकड़ने का अधिकार मिला। राज्य मत्स्य महासंघ को उल्टे पांव इलाके से भागना पड़ा। बरगी बांध विस्थापित मत्स्य उत्पादन एवं विपणन मर्यादित सहकारी संघ के बैनर तले मछुवारों की कोआपरेटिव सोसाइटीज एक सूत्र में बंधी। यह सिलसिला 1995 से 2001 तक चला।

इसके बाद मछली पकड़ने का टेंडर निकला और जो जबलपुर के बड़े (मतलब कि दबंग) शराब ठेकेदार के हाथ लगा। इस तरह लंबे और कड़े संघर्ष से हासिल हुई उपलब्धि बिखर गयी। इसकी बड़ी वजह यह रही कि जीत की खुशी में इस सच को भुला दिया गया कि लुटेरी ताकतें अपनी हार के बाद चुप नहीं बैठेंगी, नयी शक्ल में उभरेंगी और नये तरीके आजमायेंगी। इस बीच बरगी बांध से प्रभावित किसानों और मछुवारों के बीच एकता के तार ढीले पड़ते गये। यह लापरवाही घातक साबित हुई। यह सबक है कि जन संघर्षों से मिली जीत को बनाये रखना उसे हासिल करने से कहीं ज्यादा कठिन और चुनौती भरा काम हुआ करता है। इसमें तनिक भी फिसलन संघर्ष को बहुत पीछे ढकेल देती है।

बरगी बांध में चुटका की 75 फीसदी तो टाटीघाट की 90 फीसदी जमीन समा गयी। जो बची, उसमें ज्यादातर बर्रा है– बर्रा मतलब पथरीली, केवल कोंदो–कुटकी उगाने लायक। कुंडा गांव इस मायने में खुशकिस्मत है। बरगी बांध में यहां की बहुत कम जमीन गयी। यहां के आदिवासी दोफसली बड़ी जोतों के मालिक हैं और इतने सक्षम रहे हैं कि इस गांव से कभी पलायन नहीं हुआ। चुटका परमाणु बिजली संयंत्र की परियाजना इस आत्मनिर्भरता पर ग्रहण लगाने का काम करेगी। इस समझ और कमाल की एकता के चलते यह पूरा गांव परियोजना के खिलाफ है।

दुर्भाग्य से चुटका और टाटीघाट में ऐसा नहीं है। परियोजना को लेकर लोग बंटे हुए हैं। ताजा खबर यह है कि मंडला के कई भाजपाई और कांग्रेसी नेता चुटका और टाटीघाट में औने–पौने दाम में जमीन खरीद रहे हैं। इस आधार पर खुद को इलाके का वाशिंदा बताते हुए परियोजना के पक्ष में खुल कर प्रचार कर रहे हैं। यह परियोजना के विरोध में खड़े लोगों से मुकाबला करने का नया दांव है।

इसी कड़ी में गौरतलब है कि मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री अभी हाल में केंद्र सरकार से मदद की गुहार करते हुए यह खतरा बयान कर चुके हैं कि उनके सूबे में माओवादी तेजी से अपने पांव पसार रहे हैं। क्या पता कि कल को चुटका का संघर्ष परवान चढ़े तो सरकार माओवाद का ठप्पा लगा कर उसका दमन करे। तो सरकारी हथकंडों से निपटना, व्यापक एकता की राह खोलना और संघर्ष को जीत की मंजिल तक ले जाना चुटका परमाणु संघर्ष समिति के लिए बड़ी चुनौती है।

– आदियोग

हरदा जल सत्याग्रह : जितनी ताकतवर, उतनी कमजोर सत्ता

अभी–अभी मध्य प्रदेश से लौटा हूँ। वहां हरदा जिले के खरदना गाँववालों के एक सत्याग्रह में शामिल होने गया था। गाँववालों के साथ करीब अट्ठारह घंटे मैं भी पानी में खड़ा रहा।

गाँववाले तो पिछले चौदह दिन से पानी में ही खड़े थे।

कारण यह था कि पहले तो गाँव वालों से बात किये बिना ही सरकारी अफसरों और नेताओं ने इंदिरा सागर नाम का एक बड़ा बाँध बना दिया। फिर इस साल लोगों को जमीन के बदले जमीन दिए बिना ही सरकार ने बाँध में पानी भर दिया। लोगों के खेत और फसल डूब गयी।जमीन डूब गयी तो अब लोग क्या करें? बच्चों को क्या खिलाएं? लोगों ने कहा इससे तो अच्छा है कि सरकार हमारी जमीन के साथ–साथ हमें भी डूबा दे। सरकार की इस मनमर्जी के खिलाफ लोग पानी में जाकर खड़े हो गये।

देश भर में किसानों के इस विरोध प्रदर्शन के तरीके पर बड़ा आकर्षण पैदा हुआ। चारों ओर सरकार की आलोचना होने लगी। सरकार घबरा गयी। लेकिन सरकार में बैठे लोग खुद को बहुत ताकतवर मानते हैं। इसलिए सरकार ने पानी में खड़े महिलाओं और पुरुषों को ताकत का इस्तेमाल करके निकालने का फैसला किया। सरकार ने पानी में कानून की एक सौ चवालीस धारा लागू कर दी। शायद भारत में पहली बार पानी में यह धारा लागू की गयी थी। अगले दिन सुबह – सुबह पांच बजे लोगों पर पुलिस ने हमला शुरू किया। छोटे – छोटे बच्चों के साथ घरों में सोयी हुई महिलाओं और बूढ़ों को पुलिस ने घरों के दरवाजे तोड़ कर बाहर खींच कर निकालना शुरू किया। इसके बाद पानी में खड़े लोगों को बाहर निकालने के लिये पुलिस ने पानी में खड़े लोगों पर हमला किया। पुलिस के हमलों से बचने के लिये लोग ओर ज्यादा गहरे पानी में चले गये। पुलिस ने मोटर बोटों में बैठ कर लोगों के चारों तरफ घेरा डाल दिया। इसके बाद पुलिस कमांडो ने पानी में घुस कर सभी सत्याग्रहियों को खींच कर बाहर निकाला।

लोगों ने हांलाकि कोई अपराध नहीं किया था। लोग तो अपने ही खेतों में खड़े थे। सरकार ने उनके खेत में बिना बताये पानी भर दिया था। किसानो की मेहनत से लगाई गयी सोयाबीन की फसल डूब गयी। एक किसान मुझे रोते हुए बता रहा था कि भाई जी मैंने बीस हजार रुपया कर्ज्ज लेकर सोयाबीन की फसल बोई थी। अब मैं कर्ज कहां से चुकाऊंगा ? अपने बच्चों को कहां से खिलाऊंगा ?

सरकार ने लोगों के विरोध को कुचलने के लिए पूरे गाँव को उजाड़ने की तैयारी कर ली। गाँव की बिजली काट दी गयी। पीने के पानी के हैण्ड पम्प उखाड़ने की कोशिश की जाने लगी। सत्याग्रह करने वाले गाँव वालों के घरों को तोड़ने के लिए सरकारी बुलडोजर गाँव में आ गये। मुझे यह सब देख कर दो साल पहले बस्तर में अपने आश्रम को उजाड़े जाने के दृश्य याद आने लगे। तब भी सरकार ने पहले बिजली काटी थी फिर पीने के पानी के हैंडपंप उखाड़े थे और फिर सरकारी बुलडोजरों ने आश्रम में बने घरों को कुचल दिया था।

गाँववालों के साथ–साथ जब पुलिस वाले मुझे घसीट रहे थे, बच्चे रो रहे थे, किसान औरतें और पुरुष नारे लगा रहे थे – मैं उत्साह और आशा के भावों से भरा हुआ था। क्योंकि इन गावों के कमजोर से दिखने वाले लोगों ने शक्तिशाली राज्य को इतना झकझोर दिया था। कि किसी की परवाह ना करने वाला राज्य इन पर हमला करने पर आमादा हो गया था।

शायद कुछ ही वर्षों में इसी तरह से हम इस देश में करोड़ों गरीबों से उनकी जमीने ऐसे ही पीट–पीट कर छीन लेगे। गरीब इसी तरह से विरोध करेंगे। और हम ऐसे ही पुलिस से गरीबों को पिटवा कर उनकी जमीने छीन लेंगे। गरीबों से जमीने छीन कर हम अपने लिये हाइवे , शापिंग माल , हवाई अड्डे , बाँध , बिजलीघर , फैक्ट्री बनायेंगे और अपना विकास करेंगे।

हम ताकतवर हैं इसलिए हम अपनी मर्जी चलाएंगे ? ये गाँव वाले कमजोर हैं इसलिए इनकी बात सुनी भी नहीं जायेगी ? सही वो माना जाएगा जो ताकतवर है ? तर्क की कोई जरुरत नहीं है ? बातचीत की कोई गुंजाइश ही नहीं है ? और इस पर तुर्रा यह कि हम दावा भी कर रहे हैं कि अब हम अधिक सभ्य हो रहे हैं। अब हम अधिक लोकतान्त्रिक हो रहे हैं। और अब हमारा समाज अधिक अहिंसक बन रहा है।

हम किसे धोखा दे रहे हैं ? खुद को ही ना ?

करोड़ों लोगों की जमीनें ताकत के दम पर छीनना, लोगों पर बर्बर हमले करना, फिर उनसे बात भी ना करना, उनकी तरफ देखने की जहमत भी ना करना। कब तक इसे ही हम राज करने का तरीका बनाये रख पायेंगे ? क्या हमारी यह छीन झपट और क्रूरता करोड़ों गरीबों के दिलों में कभी कोई क्रोध पैदा नहीं कर पायेगी ? क्या हमें लगता है कि ये गरीब ऐसे ही अपनी जमीने सौंप कर चुपचाप मर जायेगे या रिक्शे वाले या मजदूर बन जायेंगे ? या ये लोग भीख मांग कर जी लेंगे और इनकी बीबी और बेटियां वेश्या बन कर परिवार का पेट पाल ही लेंगी ? और इन लोगों की गरीबी के कारण हमें सस्ते मजदूर मिलते रहेंगे ?

दुनिया में हर इंसान जब पैदा होता है तो जमीन, पानी, हवा, धूप, खाना, कपडा और मकान पर उसका हक जन्मजात और बराबर का होता है। और किसी भी इंसान को उसके इस कुदरती हक से वंचित नहीं किया जा सकता क्योंकि इनके बिना वह मर जाएगा।

इसलिए अगर कोई व्यक्ति या सरकार किसी भी मनुष्य से उसके यह अधिकार छीनती है तो छीनने का यह काम प्रकृति के विरुद्ध है , समाज के विरुद्ध है , संविधान के विरुद्ध है और सभ्यता के विरुद्ध है। हम रोज लाखों लोगों से उनकी जमीने, आवास , भोजन और पानी का हक छीन रहे हैं। और इसे ही हम विकास कह रहे हैं। सभ्यता कह रहे हैं। लोकतंत्र कह रहे हैं।

यदि किसी व्यक्ति के पास अनाज , कपड़ा ,मकान , कपडा , दूध दही , एकत्रित करने की शक्ति आ जाती है तो हम उसे विकसित व्यक्ति कहते है। भले ही वह व्यक्ति अनाज का एक दाना भी ना उगाता हो , मकान ना बना सकता हो, खदान से सोना ना खोद सकता हो। गाय ना चराता हो। अर्थात वह संपत्ति का निर्माण तो ना करता हो परन्तु उसके पास संपत्ति को एकत्र करने की क्षमता होने से ही हम उसे विकसित व्यक्ति कहते हैं।

बिना उत्पादन किये ही उत्पाद को एकत्र कर सकने की क्षमता प्राप्त कर लेना किसी विशेष आर्थिक प्रणाली के द्वारा ही संभव है। और ऐसी अन्यायपूर्ण आर्थिक प्रणाली समाज में लागू होना किसी राजनैतिक प्रणाली के संरक्षण के बिना संभव नहीं है। इस प्रकार के अनुत्पादक व्यक्तियों या व्यक्तियों के वर्ग को उत्पाद पर कब्जा कर लेने को जायज मानने वाली राजनैतिक प्रणाली उत्पादकों की अपनी प्रणाली तो नहीं ही हो सकती।

इस प्रकार की अव्यावहारिक, अवैज्ञानिक और अतार्किक और शोषणकारी आर्थिक और राजनैतिक प्रणाली मात्र हथियारों के दम पर ही टिकी रह सकती है और चल सकती है। इसलिए अधिक विकसित वर्गों को अधिक हथियारों, अधिक सैनिकों और अधिक जेलों की आवश्यकता पड़ती है। ताकि इस कृत्रिम राजनैतिक प्रणाली पर प्रश्न खड़े करने वालों को और इस प्रणाली को बदलने की कोशिश करने वालों को कुचला जा सके।

बिन मेहनत के हर चीज का मालिक बन बैठे हुए वर्ग के लोग अपनी इस लूट की पोल खुल जाने से डरते हैं। और इसलिए यह लोग इस प्रणाली को विश्व की सर्वश्रेष्ठ प्रणाली सिद्ध करने की कोशिश करते हैं। इस प्रणाली को यह लुटेरा वर्ग लोकतंत्र कहता है। इसे पवित्र सिद्ध करने की कोशिश करता है। इसके लिये धर्म, महापुरुष, फिल्मी सितारों, मशहूर खिलाड़ियों और सारे पवित्र प्रतीकों को अपने पक्ष में दिखाता है।

सारी दुनिया में अब यह लुटेरी प्रणाली सवालों के घेरे में आ रही है। इस प्रणाली के कारण समाज में हिंसा बढ़ रही है। हम इसका कारण नहीं समझ रहे और इस हिंसा को पुलिस के दम पर कुचलने की असफल कोशिश कर रहे हैं। देखना यह है कि यह लूट अब और कितने दिन तक अपने को हथियारों के दम पर टिका कर रख पायेगी ?

अभी लड़ाई जारी है . . .

घोघल गांव में हुए जल सत्याग्रह की आखिरकार जीत हुई। सरकार ने अपनी जिद छोड़ी और सत्याग्रहियों की मांगें मान लीं। अब ओंकारेश्वर बांध के प्रभावितों को बांध में समा गयी उनकी जमीन के बदले जमीन मिलेगी। बांध का जल स्तर तो फौरन घटा दिया गया।

जल सत्याग्रह अनोखा, बहादुराना और ऐतिहासिक कदम था। यादगार नजारा था कि 51 सत्याग्रही लगातार कंधे तक पानी में हैं। आसपास के कोई 250 गांवों के पांच हजार से अधिक लोग समर्थन में जमा हैं। पूरे देश से लोगों की आवाजाही है। समर्थकों की टोलियां भी पानी में उतर रही हैं– कोई आधे दिन तो कोई पूरा दिनतो कोई दो–तीन दिन के सत्याग्रहियों ने पूरे 17 दिन अपने शरीर को पानी में

गलाया। हालत इतनी बदतर हुई कि मछलियां अपना चारा समझ कर उनके गलते शरीर पर हमला करने लगीं। सत्याग्रहियों के अदम्य साहस और जोखिम ने इस जन कार्रवाई को देश ही नहीं, पूरी दुनिया में फैला दिया। इससे एक बार फिर विकास बनाम नाश की बहस को तेज करने का काम किया।

बढ़ते दबाव और चौतरफा हो रही थूथू ने राज्य सरकार को झुकने को मजबूर कर दिया। लेकिन याद रहे कि सरकार ने पूरे 17 दिन पानी में खड़े सत्याग्रहियों के धीरज का इम्तहान लिया और उनके शरीर को गलने दिया। जब सरकार के सर पर से पानी गुजरने लगा तो उसने अकड़ छोड़ी और सत्याग्रहियों की मांगें मानीं। यह गुजरे 10 सितंबर की बात है।

लेकिन इसके यह मतलब नहीं कि राज्य सरकार बहुत मानवीय हो गयी। इंदिरा सागर परियोजना के डूब के गांव खरदना में भी जल सत्याग्रह चल रहा है। घोघल में सत्याग्रहियों के सामने झुकनेवाली उसी सरकार ने तीसरे दिन, 12 सितंबर को, खरदना के 245 सत्याग्रहियों को जबरन पानी से निकाला और गिरफ्तार किया। इसमें नर्मदा बचाओ आंदोलन की चित्तरूपा पालित भी थीं जिनके नेतृत्व में घोघल गांव में जल सत्याग्रह हुआ था जिसके तुरंत बाद वह खरदना जल सत्याग्रह में शामिल हो गयी थीं।

पुलिसिया कार्रवाई को अंजाम देने के लिए एक दिन पहले ही, 11 सितंबर को, एक हजार से अधिक पुलिस बल की आमद ने खरदना को छावनी में बदल दिया था। सरकारें अब इतनी उजड्ड हो चली हैं कि लोकतांत्रिक और न्यायिक फैसलों को भी ताक पर पहुंचा देती हैं। याद रहे कि ओंकारेश्वर और इंदिरा सागर बांध के सिलसिले में नर्मदा पंचाट ने 1989 में फैसला दिया था कि भूधारी सभी विस्थापितों को जमीन के बदले जमीन देनी होगी और वह भी परियोजना शुरू होने से पहले। लेकिन राज्य सरकार ने इस आदेश को पिछले 25 सालों से हवा में उड़ा कर रखा।

इसके खिलाफ ओंकारेश्वर बांध के प्रभावितों ने 2008 में उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया था और तब राज्य सरकार को अदालती निर्देश मिला था कि पुनर्वास नीति का कड़ाई से पालन हो। लेकिन प्रभावितों के पक्ष में आये इस फैसले को सर्वोच्च न्यायालय में चुनौती देने में राज्य सरकार ने देर नहीं की। यह अलग बात है कि पिछले साल मई में सर्वोच्च न्यायालय ने उच्च न्यायालय के फैसले को यथावत रखा। आदेश के मुताबिक कोई ढाई हजार विस्थापितों ने शिकायत निवारण प्राधिकरण में आवेदन दिये। अब तक एक हजार से अधिक आवेदनों पर सुनवाई हो चुकी है। ढ़ाई सौ आवेदनों पर आदेश भी आ चुके हैं कि सरकार और कंपनी उन प्रभावितों को 5.5 एकड़ जमीन उपलब्ध कराये जो मुआवजे की राशि वापस करें।

उधर, 24 जुलाई को सर्वोच्च न्यायालय ने ओंकारेश्वर बांध पर दिया गया अपना आदेश इंदिरा सागर बांध पर भी लागू कर दिया। इससे इंदिरा सागर बांध के 20 हजार से अधिक किसानों में से हर एक 5.5 एकड़ सिंचित जमीन पाने का हकदार हो गया।

राज्य सरकार के लिए यह बुरी हार थी। इससे बौखला कर सर्वोच्च न्यायालय का फैसला आने के अगले ही दिन बांधों में पानी का स्तर अचानक बढ़ा दिया गया। यह घिनौनी साजिश थी कि इससे भगदड़ मचेगी और अदालत में जीत चुके विस्थापित जान बचा कर भागेंगे और आंदोलन टूट जायेगा। लेकिन यह बचकानी चाल फिस्स हो गयी। पहले घोघल में और फिर खरदना गांव में जल सत्याग्रह की शुरूआत हो गयी और जो राज्य सरकार को घेरने और मजबूर करने का जनता का बहुत धारदार हथियार साबित हुई।

सर्वोच्च न्यायालय का आदेश यह भी था कि बांध का स्तर 260 मीटर से अधिक न हो। उसे 262 मीटर किया गया तो इलाके में तबाही मच गयी। सैकड़ों एकड़ खेत पानी में डूब गये, कई गांव टापू बन गये। जल स्तर की सीमा बढ़ाना सीधे–सीधे अदालती आदेश की अवमानना है।

इसमें दो राय नहीं कि राज्य सरकार को ओंकारेश्वर बांध के प्रभावितों की तरह इंदिरा सागर बांध का भी जल स्तर घटाना ही होगा। आखिर पूरा देश इंदिरा सागर बांध के प्रभावितों के साथ खड़ा है और कोई भी सरकार जनता से बड़ी ताकतवर नहीं हो सकती।

अभी तो ये अंगड़ाई थी, आगे और लड़ाई है। जी हां, दोनों बांधों के प्रभावितों को अभी जमीन हासिल करने के लिए लड़ना होगा। सर्वोच्च न्यायालय ने साफ कहा है कि प्रभावितों को दी जानेवाली जमीन उनसे ली गयी जमीन से कम उपजाऊ नहीं होनी चाहिए। यह वापसी आसान नहीं।

अभी तो शुरूआती जीत हासिल हुई है, प्रभावितों की हकदारी पर मोहर लगी है। पूरी जीत अभी बाकी है। दूसरी लड़ाइ अब शुरू होनी है।

– संघर्ष संवाद टीम

नगड़ी के रैयतों को न्याय कौन देगा?

रांची से सटे कांके थानान्तर्गत आदिवासी बहुल नगड़ी गांव है। राज्य सरकार की योजना यहां नेशनल ला यूनिवर्सिटी, आइआइटी और आइआइएम बनाने की है। इसके लिए गांव की 227 एकड़ जमीन निशाने पर है। उधर, लोग अपनी जमीन छोड़ने को तैयार नहीं। ऐसे में राज्य सरकार अपनी ताकत का इस्तेमाल करने पर आमादा है। दुख की बात है कि उच्च न्यायालय भी राज्य सरकार के साथ खड़ा है। इस पूरे मामले पर पेश है ग्लैडसन डुंगडुंग और दयामनी बारला के आलेख;

9 जनवरी 2012 की तारीख नगड़ी गांव के लिए भारी मुसीबत लेकर आयी। उस दिन बड़ी संख्या में पुलिस बल गांव पहुंचा और देखते–देखते 227 एकड़ जमीन उसके कब्जे में आ गयी। आनन–फानन चारदीवारी बनाने का भी काम शुरू हो गया। अपने ही खेतों में जाने की मनाही हो गयी। सौ एकड़ से अधिक जमीन पर खड़ी फसलों और उगायी गयी सब्जियों पर बुलडोजर चला दिया गया। इस जबरिया भूमि अधिग्रहण के विरोध में आंदोलन तेज हुआ, तब कहीं लोगों को इस जमीन पर बस बैल–बकरियों को चराने की अनुमति मिली।

सरकार कहती है कि जमीन का अधिग्रहण 1957–58 में किया जा चुका है और जमीनी सच यह है कि पिछली जनवरी तक वहां गांववाले खेती करते रहे हैं। जमाबंदी भी अदा करते रहे हैं। सरकारी दावे की यह सबसे बड़ी काट है।

सच की पड़ताल करने के लिए मैंने सूचना के अधिकार का उपयोग किया। भूमि अर्जन विभाग से 29 फरवरी को जवाब मिला कि 1957–58 में जब भूमि अधिग्रहण हुआ, तब 153 रैयत थे। इनमें से 128 रैयतों ने मुआवजा लेने से इंकार कर दिया जो आज भी रांची कोषागार में जमा है। अधिग्रहण बिरसा कृषि विश्वविद्यालय के लिए किया गया था।

उधर, विश्वविद्यालय से जवाब मिला कि उन्हें नहीं पता कि कितनी एकड़ जमीन का उनके स्तर पर अधिग्रहण हुआ, और कि उसका कितना मुआवजा दिया गया। विश्वविद्यालय को इतना जरूर पता है कि उस जमीन का किसी प्रकार का उपयोग नहीं किया गया।

अब थोड़ा पीछे लौटें। 2008 में रिंग रोड बनाये जाने की योजना आयी और जिसका रास्ता इसी जमीन से होकर जाना था। पथ निर्माण विभाग ने अनापत्ति प्रमाणपत्र मांगा तो भूमि अर्जन विभाग से जवाब मिला कि इसे जारी करने का अधिकार कृषि विश्वविद्यालय का है, इसलिए कि जमीन का मालिकाना उसी के पास है। विश्वविद्यालय से जवाब मिला कि वह जमीन अभी तक अधिग्रहीत नहीं हो सकी है इसलिए अनापत्ति प्रमाणपत्र देने का प्रश्न ही नहीं उठता।

बहरहाल, 9 जनवरी 2012 की घटना से भूमि अधिग्रहण विरोधी आंदोलन की नींव पड़ गयी। 4 मार्च से अपनी खेती की जमीन बचाने के लिए नगड़ी में धरने की शुरूआत हुई। चिलचिलाती धूप में लोग डटे रहे। इस एकजुटता और संघर्षशीलता के चलते ही 6 मार्च से 30 अप्रैल तक चारदीवारी बनाने का काम रुका रहा। इसे चालू करवाने के लिए बार एसोसिएशन ने 30 अप्रैल को उच्च न्यायालय में जनहित याचिका दायर की और उसी दिन फैसला भी आ गया कि निर्माण जारी रहे। इस फैसले का आधार यह तर्क था कि लॉ कालेज में जगह की कमी है जिससे शिक्षण कार्य प्रभावित हो रहा है इसलिए निर्माण जल्दी पूरा किया जाये।

नगड़ी के गांववालों के भूमि अधिग्रहण विरोधी आंदोलन के समर्थन में 25 जुलाई को झारखंड बंद का आअ्वान हुआ। एक दिन पहले, 24 जुलाई की शाम, रांची में कई संगठनों की आरे से मशाल जुलूस निकला जो अल्बर्ट एक्का चौक पर सभा में बदला। गुमला, रामगढ़, धनबाद, बोकारो, गिरिडीह और रांची में बंद का अच्छा असर रहा। छिटपुट हिंसा की घटनाएं भी हुईं। रांची प्रशासन में तीन सौ लोगों पर मामला दर्ज हुआ। इनमें माले के जर्नादन प्रसाद, बहादुर उरांव, गुनी उरांव, ग्लैडसन डुंगडुंग और मेरा भी नाम है।

झारखण्ड विशिष्ट राज्य है जहां 32 विभिन्न तरह के आदिवासी समुदाय निवास करते हैं और जिनकी अपनी अद्‌भुत संस्कृति है। उनकी संस्कृति, आजीविका एवं अस्तित्व प्राकृतिक संसाधनों – जल, जंगल और जमीन पर आधारित है। छोटानागपुर काश्तकारी अधिनियम 1908 में आदिवासियों की परंपरा, संस्कृति एवं रीति–रिवाज को कानून से ऊपर माना गया है। ऐसी स्थिति में भूमि अधिग्रहण कानून 1894 की विभिन्न धाराओं का हवाला देते हुए उनकी जमीन को नहीं छीना जा सकता। रांची के कांके प्रखण्ड स्थित नगड़ी मौजा की 227 एकड़ जमीन को राज्य सरकार विकास एवं जनहित के नाम पर आदिवासियों से छीनने की कोशिश कर रही है। इस मामले में आगे बढ़ने से पहले कुछ पहलुओं पर विचार की जरूरत है।

1. विशेष क्षेत्र के लिए विशेष कानून

देश में दो तरह के कानून बनते रहे हैं – सामान्य कानून एवं विशेष क्षेत्र, समुदाय व परिस्थिति के अनुरूप विशेष कानून। लेकिन हमेशा देखा गया है कि विशेष कानूनों के रहते हुए भी केन्द्र एवं राज्य सरकारें अपनी जरूरतों के

हिसाब से सामान्य कानूनों को लागू करने में ज्यादा दिल. चस्पी लेती हैं और विशेष कानूनों को दरकिनार कर दिया जाता है जो सरासर गलत है। देश का कोई भी सामान्य कानून विशेष कानून को छेक नहीं सकता है। 5 जनवरी, 2005 को सुप्रीम कोर्ट ने ''इरिडियम इंडिया टेलिकॉम लिमिडेट बनाम मोटोरोला'' के मामले में फैसला सुनाते हुए कहा था कि जब भी समान्य कानून एवं विशेष कानून के बीच विवाद हो तब विशेष कानून ही हमेशा लागू होगा। झारखण्ड में देखा जाये तो छोटानागपुर टेनेंसी एक्ट 1908 (सी.एन.टी.) विशेष कानून है जिसे भारत के संविधान के अनुच्छेद 31–बी तथा नौवीं अनुसूची की मान्यता प्राप्त है। इसलिए इस कानून के सभी प्रावधान संवैधानिक हैं एवं देश का कोई भी सामान्य कानून इसे छेक नहीं सकता है।

भूमि अधिग्रहण कानून 1894 एक सामान्य कानून है जो पूरे देश में लागू है वहीं सी.एन.टी. एक्ट विशेष कानून है जो संपूर्ण छोटानागपुर में लागू है एवं नगड़ी मौजा इसी क्षेत्र में आता है। इसलिए झारखण्ड सरकार नगड़ी के रैयतों की जमीन को सी.एन.टी. एक्ट की धारा–50 के तहत ही अधिग्रहण कर सकती है। राज्य सरकार द्वारा नगड़ी गांव की 227 एकड़ जमीन को भूमि अधिग्रहण कानून 1894 के तहत 1957–58 में अधिग्रहण करने का दावा न सिर्फ गैर–कानूनी बल्कि असंवैधानिक भी है। छोटानागपुर क्षेत्र में विकास कार्यों के लिए भूमि का अधिग्रहण सी.एन.टी. एक्ट की धारा– 50 के तहत ही किया जाना है तथा भूमि अधिग्रहण कानून सिर्फ मुआवजा एवं अदालती कार्रवाई में उपयोग किया जा सकेगा। सी.एन.टी. एक्ट की धारा– 50 (2) में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि मुआवजा नहीं स्वीकार करने वाले रैयत सी.एन.टी. एक्ट की धारा– 50 (6) के तहत न्यायालय जा सकते हैं, जिसमें कानूनी प्रक्रिया भूमि अधिग्रहण कानून 1894 भाग–दो के तहत होगी। ऐसी परिस्थिति में छोटानागपुर में अब तक सरकार द्वारा विकास कार्यों के लिए भूमि अधिग्रहण कानून 1894 के तहत किया गया जमीन का अधिग्रहण अवैध एवं असंवैधानिक है।

2. अत्यावश्यकता की स्थिति में अधिग्रहण–

राज्य सरकार ने नगड़ी के रैयतों की जमीन का अधिग्रहण करते समय भी रैयतों के साथ धोखा किया। सरकार यह दावा करती है कि नगड़ी गांव की 227 एकड़ जमीन का अधिग्रहण 'भूमि अधिग्रहण कानून 1894' की धारा– 17 (4) के तहत वर्ष 1957–58 में राजेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जो अब बिरसा कृषि विश्व विद्यालय के नाम से जाना जाता है, के विस्तार एवं सीड बैंक बनाने के उद्देश्य से किया गया। अंग्रेजों ने भूमि अधिग्रहण कानून की धारा– 17 (4) को अपातकाल की स्थिति से निपटने के उद्देश्य से बनाया था। इस धारा के तहत सरकार 'अत्यावश्यकता' बताकर किसी भी जमीन का अधिग्रहण कर सकती है जिसमें भूमि अधिग्रहण कानून की धारा– 5 (2) लागू नहीं होती, जिसके तहत जन सुनवाई की व्यवस्था है। यहां सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि अगर नगड़ी की जमीन को 'अत्यावश्यकता' की स्थिति में अधिग्रहीत किया गया था तो पिछले 60 वर्षों तक इसका उपयोग क्यों नहीं किया गया? क्या विश्वविद्यालय का विस्तार एवं सीड बैंक का निर्माण 'अत्यावश्यकता' के दायरे में आता है? क्या सरकार ने रैयतों को प्रारंभ में ही धोखा देने का काम नहीं किया?

सुप्रीम कोर्ट ने स्पेशल लीव पीटीशन (सिविल) सं. 8939 वर्ष 2010 देव शरण एवं अन्य बनाम स्टेट ऑफ यूपी एवं अन्य मामले में कहा कि राज्य सरकार द्वारा जमीन अधिग्रहण में देरी इस बात को दर्शाता है कि जमीन अधिग्रहण की कोई ''अत्यावश्यकता'' नहीं थी। सुप्रीम कोर्ट ने यह भी कहा कि भूमि अधिग्रहण कानून 1894 संविधान लागू होने से पहले का कानून है जो पराधीनता वह कठोर कानून है और जो लोगों के सम्पति के अधिकार को प्रभावित करता है। सुप्रीम कोर्ट ने यहां तक कहा कि ''जनहित'' को लोक कल्याणकारी राज्य की दृष्टि से देखा जाना चाहिए न कि इसको ज्यों का त्यों रखा जाना चाहिए। इस मामले में उत्तर प्रदेश की सरकार ने शाहजहांपुर जिले के पूवायन तहसील अन्तर्गत मोछा ग्राम की 63.93 एकड़ कृषि भूमि को जिला जेल बनाने के लिए भूमि अधिग्रहण कानून 1894 की धारा– 17 (4) के तहत 'अत्यावश्यकता' दिखाकर बिना जन सुनवाई किये भूमि का अधिग्रहण किया था। सरकार की दलील थी कि शाहज. हांपुर के जेल में 511 की क्षमता से कहीं ज्यादा 1869 कैदी हैं एवं यह जेल भीड़भाड़ इलाके में है इसलिए इसे शहर से दूर स्थापित किया जाना चाहिए। इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने सरकार की दलील को सही ठहराते हुए रैयतों की याचिका को खारिज कर दिया था। लेकिन सुप्रीम कोर्ट ने सरकार द्वारा भूमि अधिग्रहण कानून के दुरूपयोग को सही पाते हुए रैयतों के पक्ष को सही ठहराया जिसमें रैयतों ने सरकार पर भूमि अधिग्रहण कानून 1894 की धारा– 17 (4) का दुरूपयोग करते हुए उनकी कृषि भूमि का गैर–कानूनी तरीके से अधिग्रहण करने का आरोप लगाया था।

3. अधिग्रहीत भूमि की वापसी

छोटानागपुर क्षेत्र के लिए विशेष कानून होने के बावजूद सरकार नगड़ी की जमीन को भूमि अधिग्रहण कानून 1894 के तहत अधिग्रहीत मानती है वहीं इसी कानून की धारा– 48 में व्यवस्था है कि उपयोग नहीं होने की स्थिति में जमीन मूल रैयतों को लौटा देनी होगी। राज्य सरकार नगड़ी मौजा की जमीन का उपयोग पिछले 60 वर्षें तक नहीं कर सकी इसका मतलब उस पर मूल रैयतों का ही हक बनता है। इसी तरह जब नगड़ी मौजा की जमीन का अधिग्रहण माना गया, उस समय यह क्षेत्र बिहार में आता था। ऐसी स्थिति में जमीन पर बिहार भूमि सुधार कानून 1950 लागू होता है

जिसमें कहा गया है कि सरकार द्वारा 1972 से पहले अधिग्रहीत जमीन का उपयोग नहीं होने पर अधिग्रहित जमीन मूल रैयतों की होगी। सरकार नगड़ी मौजा की जमीन को 1957–58 में अधिग्रहण करने के बावजूद 2011 तक इसका उपयोग नहीं कर सकी थी, इसलिए इस कानून के तहत यह जमीन रैयतों की है।

4. अधिग्रहीत भूमि का दूसरे उद्देश्य में उपयोग गैर–कानूनी

सरकार यह मानती है कि नगड़ी मौजा की भूमि का अधिग्रहण 1957–58 में राजेन्द्र (बिरसा) कृषि विश्वविद्यालय का विस्तार एवं सीड बैंक बनाने के उद्देश्य से किया गया था। लेकिन वर्तमान में इस जमीन का उपयोग रिंग रोड़ एवं शैक्षिक संस्थानों के निर्माण के लिए किया जा रहा है जो भूमि अधिग्रहण के मूल उद्देश्यों के खिलाफ है। भूमि अधिग्रहण ऑर्डिनेंश 1967 के अनुसार अधिग्रहीत जमीन का उपयोग दूसरे उद्देश्य के लिए नहीं किया जा सकता है। एच.ई.सी., रांची के मामले में रांची के उपायुक्त सुधीर प्रसाद ने पत्रांक 22113–डी.सी. दिनांक 18–11–1991 द्वारा भूमि सुधार आयुक्त, पटना को पत्र लिखा कर कहा था कि एच. ई.सी. ने गैरकानूनी तरीके से 300 एकड़ अधिग्रहित जमीन दूसरे संस्थानों को बेच दी है, जो एम.ओ.यू. का उल्लंघन है इसलिए एच.ई.सी. के खिलाफ कार्रवाई की जानी चाहिए। यह अलग बात है कि अब तक एच.ई.सी. प्रबंधन के खिलाफ कोई कार्रवाई नहीं हुई है जबकि एच.ई.सी. ने अब तक लगभग 500 एकड़ जमीन 35 निजी संस्थानों को उनसे भारी रकम लेकर लीज पर बेच भी चुका है।

5. मुआवजे के खेल में धोखा

जब राज्य सरकार 2008 में रिंग रोड का निर्माण कर रही थी, उसी समय पहली बार नगड़ी मौजा का मामला सामने आया। राष्ट्रहित को सर्वोपरि मानते हुए ग्रामीण रिंग रोड के निर्माण के लिए 13.10 एकड़ जमीन देने को तैयार हो गये लेकिन सरकार ने उन्हें मुआवजा देने से इंकार कर दिया। इस पर रैयतों ने झारखण्ड उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया। रैयतों ने 2009 में रिंग रोड की 13.10 एकड़ जमीन को लेकर मुआवजे की मांग की लेकिन न्यायालय ने उसी समय 227 एकड़ को जोड़ कर 15 प्रतिशत ब्याज देने की बात कही। यहां भी कानून की अवहेलना की गई। भूमि अधिग्रहण कानून की धारा– 34 के तहत ट्रेजरी में रखे गये मुआवजे में प्रतिवर्ष 9 प्रतिशत ब्याज देना है लेकिन माननीय उच्च न्यायलय ने भी इस प्रावधान को नजरांदाज कर दिया एवं सरकार को सिर्फ 15 प्रतिशत ब्याज देने को कहा। इस तरह से 227 एकड़ जमीन की कीमत मात्र 1.5 लाख रूपये आंकी गयी। झारखण्ड सरकार अभी भी यह जमीन, जिसका वर्तमान बाजार भाव लगभग 341 करोड़ रूपये है, सरकारी निबंधन दर पर लेना चाहती है। सरकार का यह कदम रैयतों के जले में नमक छिड़कने जैसा ही है क्योंकि ये लोग पिछले कई महीनों से आंदोलन कर रहे हैं। रैयतों ने अपनी जमीन पर 150 दिनों तक शांतिपूर्ण तरीके से धरना दिया और इस दौरान लू लगने से तीन महिलाओं की मौत भी हुई। अब वे अपनी जमीन वापस चाहते हैं।

6. पांचवीं अनुसूची क्षेत्र

झारखण्ड राज्य संविधान की पांचवीं अनुसूची के तहत आता है जहां की शासन व्यवस्था का संचालन करने के लिए संवैधानिक रूप से ''आदिवासी सलाहकार परिषद'' को सर्वोपरि माना गया है। इसका मुख्य कार्य राज्य में आदिवासियों के कल्याण एवं विकास से संबंधित सभी मामलों में राज्यपाल को समय–समय पर सलाह देना है। परिषद से विचार–विमर्श के बगैर, राज्यपाल को किसी भी प्रकार का कानून चलाने का अधिकार नहीं है। संविधान में परिषद का कार्य व्यापक है। इसमें कानूनी प्रक्रियाओं के अलावा नीति–निर्धारण, विकास योजनाओं का पर्यवेक्षण तथा आदिवासी इलाकों में प्रभावी शासन चलाने के लिए भी जिम्मेदारी दी गई है। इसका अर्थ यह है कि किसी भी विकास कार्य को संचालित करने एवं इसके लिए जमीन अधिग्रहण करने से पहले ''परिषद'' का विमर्श अति–आवश्यक है। नगड़ी मामले में सरकार ने परिषद से कोई वार्ता नहीं की। इसी तरह परिषद को बाईपास करते हुए झारखण्ड में 100 से ज्यादा एम.ओ.यू. पर हस्ताक्षर हो गये।

अनुसूचित क्षेत्र से संबंधित राज्य के राज्यपाल को कानून संबंधि कई कानूनी अधिकार एवं शक्तियां प्रदान की गई हैं जिसमें राज्यपाल यह निर्णय लेने के लिए स्वतंत्र है कि संसद या विधान मण्डल द्वारा निर्मित कानून अनुसूचित क्षेत्रों के लिए उपयुक्त हैं या नहीं। वे जन–अधिसूचना द्वारा निर्देश जारी कर सकते हैं कि संसद या विधान मण्डल द्वारा पारित कोई कानून अनुसूचित क्षेत्र या इसके किसी भाग में लागू नहीं होगा या कुछ संशोधनों या अपवादों के साथ लागू होगा। अर्थात् राज्यपाल कानून पर रोक या संशोधन कर सकते हैं जो इस क्षेत्र विशेष के लिए उपयुक्त न हों। उन्हें इस मामले में अधिसूचना जारी करने के लिए आदिवासी सलाहकार परिषद अथवा राष्ट्रपति से परामर्श लेने की भी जरूरत नहीं है। साथ ही राज्यपाल किसी राज्य में किसी ऐसे क्षेत्र की शांति और सुशासन व्यवस्था बहाल करने के लिए नियम बनाने को अधिकृत हैं। यह अधिकार मूलतः जमीन के मामलों से जुड़े आदिवासियों के अधिकारों एवं हितों की सुरक्षा तथा साहूकारों द्वारा किये जाने वाले शोषण से संबंधित है। बावजूद इसके नगड़ी मामले में राज्यपाल चुप्पी साधे हुए हैं। नगड़ी मामले में राज्यपाल चाहे तो एक जन–सूचना द्वारा इसका हल निकाल सकते हैं एवं भूमि अधिग्रहण कानून 1894 को निरस्त कर सकते हैं।

7. कृषि भूमि एवं बंजर भूमि का खेल

झारखण्ड सरकार अपनी कृषि नीति में कृषि योग्य भूमि का गैर–कृषि कार्यों में उपयोग करने के खिलाफ है। लेकिन हकीकत में इससे उलट काम कर रही है। नगड़ी की कृषि भूमि पर शिक्षण संस्थान खोलना कृषि नीति का उल्लंघन है। वहीं दूसरी ओर सरकार बंजर भूमि को कृषि योग्य भूमि बनाने के लिए करोड़ों रूपये खर्च करती है। क्या यह आम जनता के पैसों का दुरूपयोग नहीं है? विकास कार्यों के लिए बंजर जमीन का उपयोग क्यों नहीं किया जाता है? छोटे किसानों के लिए कृषि ही खाद्य सुरक्षा की गारंटी देती है। खेत चला जायेगा तो लोग कहां से खाना खायेंगे? राज्य की बढ़ती जनसंख्या को अनाज उपलब्ध कराने के लिए कौन चिंता करेगा? कृषि योग्य भूमि को गैर–कृषि कार्यों में लगायेंगे तो अनाज कहां से पैदा होगा? क्या विदेशों से अनाज खरीद कर अनाज की कमी को पूरा किया जायेगा? क्या यह तर्कसंगत है?

8. जमीन का न्यायपूर्ण उपयोग

जमीन के न्यायपूर्ण उपयोग के बारे में सोचने की जरूरत है। क्योंकि जमीन एक सीमित संसाधन है और लोगों की जरूरत समय के अनुसार बढ़ती ही जायेगी। जो भी कंपनी विकास के नाम पर जितनी जमीन और पानी मांगती है, उस के लिए राज्य सरकार एम.ओ.यू. करती है। लेकिन यह जानने की कभी कोशिश नहीं करती कि क्या अमुक कंपनी को उतनी जमीन चाहिए? उदाहरण के लिए मित्तल कंपनी को एक इंटिग्रेटेड स्टील प्लांट के लिए 25 हजार एकड़ जमीन देने के लिए सरकार ने एम.ओ.यू. किया। सवाल है कि उसे इतनी जमीन की क्या जरूरत है? झारखण्ड सरकार राज्य का विकास चाहती है या मित्तल जैसी कंपनियों का साम्राज्य स्थापित करना चाहती है? झारखण्ड का इतिहास बताता है कि अधिग्रहित जमीन का उपयोग नहीं किया जा सका है। एच.ई.सी., रांची ने 7187 एकड़ जमीन का अधिग्रहण किया लेकिन सिर्फ 3,885 एकड़ का ही उपयोग कर पाया। इसी तरह बी.एस.एल., बोकारो ने 33,346 जमीन का अधिग्रहण किया, जिसमें मात्र 19,187 एकड़ का उपयोग हुआ। इससे स्पष्ट है कि विकास परियोजनाओं के लिए जरूरत से ज्यादा जमीन का अधिग्रहण किया जाता है एवं बाद में अधिग्रहीत जमीन को गैर–उद्देश्य कार्यो में लगाया जाता है।

9. सरकार की भूमिका संदेहजनक

नगड़ी मामले में राज्य सरकार की भूमिका काफी संदेहजनक लगती है। राज्य सरकार ने न्यायालय को बार–बार गुमराह किया। के.स. 2347–2012 ऑर्डर नं.– 3 में कहा गया है कि महाधिवक्ता ने झारखण्ड उच्च न्यायालय को बताया कि नगड़ी की जमीन खेती योग्य नहीं है और वहां खेती नहीं होती। क्या सरकार बता सकती है कि अगर नगड़ी गांव में खेती नहीं होती है तो क्या वहां के लोग पिछले 60 वर्षों से मिट्टी खा कर जिन्दा थे? सरकार ने पहले न्यायालय के आदेश का हवाला देते हुए बंदूक के बल पर ग्रामीणों की जमीन छीनने की पूरी कोशिश की। जनाक्रोश के बाद उच्च न्यायालय ने ऑर्डर नं.– 4 के तहत सरकार को इस मामले का हल ढूढ़ने को कहा लेकिन सरकार ने अब तक कुछ ठोस कदम नहीं उठाया, सिर्फ दिखाने के लिए उच्च स्तरीय कमेटी का गठन किया। इसके अध्यक्ष मथुरा महतो बार–बार कहते हैं कि नगड़ीवासियों के साथ अन्याय हुआ और रिपोर्ट कुछ और लिखते हैं। तीन बैठकों के बाद उसकी रिपोर्ट में कहते हैं कि 85 प्रतिशत लोग जमीन देना चाहते हैं जबकि रैयतों ने इन बैठकों में सरकार से जमीन वापस देने की मांग की है। सरकार ने उच्च न्यायालय को रिपोर्ट नहीं दी, ताकि न्यायालय स्वंय निर्णय ले, उसके बाद सरकार कहेगी कि उच्च न्यायालय का फैसला है इसलिए हम लागू कर रहे हैं। राज्य सरकार आदिवासियों के हितों की रक्षा हेतु बने कानून को लागू नहीं करती है लेकिन उनके जमीन, जंगल और संसाधनों को लूटने वाले कानूनों को लागू करती है। जमीन लूटने का सारा खेल पूंजीपतियों के इशारे पर किया जा रहा है।

10. न्यायपालिका पर सवाल

नगड़ी मामले में न्यायपालिका पर भी सवाल है। इसलिए क्योंकि मामला कोंफ्लिक्ट ऑफ इंटरेस्ट का बन गया है। बार एसोसिएशन (झारखण्ड उच्च न्यायालय, रांची) ने 3 मई 2012 को एक जनहित याचिका दायर की जिस पर सुनवाई करते हुए उच्च न्यायालय ने राज्य सरकार को कई आदेश दिये। सबसे बड़ा सवाल यह है कि नेशनल लॉ यूनिवर्सिटी के बदले बार एसोसिएशन ने मामला क्यों दर्ज किया? क्या नेशनल लॉ यूनिवर्सिटी मामला दर्ज कराने में अक्षम था या कोई कानूनी बाध्यताएं थीं? नेशनल यूनिवर्सिटी फॉर रिसर्च एण्ड स्टडीज ऑन लॉ, रांची एक्ट 2010 में स्पष्ट रूप से लिखा हुआ है कि लॉ यूनिवर्सिटी का कुलपति झारखण्ड उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश होगा। जब लॉ यूनिवर्सिटी का उदघाटन 2010 में किया गया था, तब उस समय मुख्य न्यायाधीश ज्ञानसुधा मिश्र थीं और वे लॉ यूनिवर्सिटी की पहली कुलपति बनीं। बाद में न्यायाधीश भगवती प्रसाद ने उनकी जगह ली।

नगड़ी के मामले में माननीय उच्च न्यायालय ने अब तक कई आदेश जारी किये हैं जिसका अध्ययन करने से स्पष्ट दिखता है कि माननीय उच्च न्यायालय दोहरा मापदण्ड अपना रहा है। उदाहरण के रूप में न्यायालय कहता है कि पिछले 50 वर्षों का रेवेन्यू रिकार्ड एवं जमीन पर कब्जा होने के बावजूद रैयत जमीन पर अधिकार नहीं जता सकते। लेकिन वहीं न्यायालय यह भी कहता है कि लॉ यूनिवर्सिटी

के पास उपलब्ध पिछले 6 महीने का रेवेन्यू रिकॉर्ड जमीन पर अपना अधिकार जताने के लिए पर्याप्त है। यह कैसा न्याय है? न्यायालय को संस्थानों के बारे में चिंता है लेकिन लोगों की आजीविका के बारे में नहीं जो उनका मौलिक अधिकार है। न्यायालय सरकार से यह भी सवाल पूछता है कि खेती योग्य जमीन केवल नगड़ी में है? इस जमीन में कितनी उपज होती है? सरकार बताये कि क्या यहां कानून का राज चलेगा या सड़क पर फैसले होंगे, इत्यादि? न्यायालय भूमि अधिग्रहण काननू 1894 की व्याख्या करने में भी नहीं थकती। लेकिन उसे यहां का विशेष कानून छोटानागपुर टेनेंसी एक्ट, पांचवीं अनुसूची के प्रावधान एवं पेसा कानून इत्यादि के बारे में कोई चिंता नहीं है। उसे बाहरी बच्चों की चिंता है पर नगड़ी के बच्चों की नहीं। क्यो?

11. अभिव्यक्ति की आजादी का हनन

नगड़ी के मामले में झारखण्ड सरकार ने बार–बार कहा कि नगड़ी के रैयत सरकार को जमीन देने के लिए तैयार हैं लेकिन बाहरी लोग ग्रामीणों को भड़का रहे हैं। सरकार के महाधिवक्ता ने 6 अगस्त 2012 को न्यायालय से कहा कि नगड़ी मामले में जब भी सरकार ग्रामीणों के साथ वार्ता करती है, बाहरी लोग जिसमें दयामनी बारला, ग्लैडसन डुंग. डुंग एवं रतन तिर्की जैसे लोग पहुंच जाते है एवं ग्रामीणों को भड़काते हैं। न्यायालय ने भी अपने आदेशों में विस्तार से कहा है कि बाहरी लोगों ने 1957–58 में भी रैयतों को भड़काया और अब भी भड़का रहे हैं। भारतीय संविधान अनुच्छेद– 19 देश के सभी व्यक्तियों को अभिव्यक्ति की आजादी देता है। इसलिए कोई भी व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के मौलिक अधिकारों के हनन के खिलाफ आवाज उठा सकता है। लेकिन झारखण्ड सरकार एवं उच्च न्यायालय ने अभिव्यक्ति की आजादी में भी गंभीर हस्तक्षेप करने की कोशिश की है जो असंवैधानिक है। अगर अभिव्यक्ति की आजादी खत्म हो गई तो कोई भी अधिकार लेना संभव नहीं होगा।

पोटका में भूषण स्टील प्लांट के खिलाफ 22 सितंबर से धरना जारी......

हम पोटका प्रखंड के लोग पिछले कई वर्षों से इस खेत्र में भूषण कंपनी का कारखाना लगने का विरोध करते आ रहे हैं। हमने कितनी सारी जनसभाएं कीं, कई बार जिला मुख्यालय में हजारों लोगों के जुलूस, प्रदर्शन किये। उपायुक्त से लेकर राज्यपाल तक सभी अधिकारियों के स्मारपत्र देकर बार–बार बताया है कि पोटका प्रखंड की जनता भूषण का कारखाना यहां लगने के खिलाफ है। आगे भी हम इसका विरोध करेंगे, भले ही इसके लिए हमें जेल जाना पड़े या गोली खानी पड़े।

हमारे सारे विरोध के बावजूद अधिकारी–गण जनता के भले की बात सोचने के बदले भूषण कंपनी की सेवा में लगे हुए हैं। सब जानते हैं कि यह कंपनी यहां जनता के भले के लिए नहीं बल्कि झारखण्ड का लोहा, कोयला, पानी और दूसरे संसाधनों को लूटने यहां सरकारी अफसरों और गांव के कुछ मुखियाओं को भी घूस देकर, होटलों में दारू पिलाकर अपने काम में लगा रही है।

हम बार–बार सरकार से मांग करते रहे हैं कि वह खेतों के लिए सिंचाई की व्यवस्था करे, लेकिन उसने नहीं किया। लेकिन वही सरकार भूषण कंपनी को 30 किलोमीटर दूर से स्वर्णरेखा का पानी मोटे पाइप से लाने और गहरे बोरिंग से भूजल निकालने की अनुमति दे रही है। इस बोरिंग से कंपनी इतना अधिक पानी खींच लेगी कि चारों तरफ के गांवों को पीने का पानी मिलना भी मुश्किल हो जाएगा। नदी के पानी और भूजल पर पहला हक खेती और ग्रामीणों का है। हम पानी लूटने नहीं देंगे।

दोस्तों, सरकार कभी भी गांवों के विकास के प्रति गंभीर नहीं रही। सरकार और कंपनियों ने ग्रामांचल में ऐसी परिस्थितियां पैदा कर दी हैं कि गांव का विकास न हो और लोग मजबूर होकर जमीनें सस्ते में बेच दें और पलायन कर जाएं। अब हम यह रवैया चलने नहीं देंगे। गांवों का विकास करना होगा। पानी की व्यवस्था करो, खेती, पशुपालन, मछली पालन, बागवानी, ग्रामीण उद्योग आदि का विकास करो; शहर के स्तर की शिक्षा और चिकित्सा की व्यवस्था करो। ऐसा विकास होने से गांव में ही सबके लिए भरपूर रोजगार मिलेगा, पेट में दाना होगा और पॉकेट में पैसा होगा, गांव में ही हमारे बच्चों के उज्ज्वल भविष्य की नींव पड़ेगी। हमें गांव के विकास के लिए लड़ना होगा। सही और पूरा उपयोग करें तो हमारी हर एकड़ जमीन से हर साल लाखों की कमाई हो सकती है। सरकार बड़े कारखानेदारों, लुटेरों को खुश करना छोड़े और गांव के विकास को प्राथमिकता दे तो गांवों का ऐसा विकास हो सकता है।

भूषण का कारखाना लगने से प्रदूषण फैलेगा, पानी बर्बाद होगा, खनिज लूटे जायेंगे, जंगल कटेंगे, किसानों से अधिकाधिक जमीन छिनती जायेंगी। इसको अनुमति देने का कोई सवाल ही नहीं होना चाहिए। कंपनी ने अभी तक जितनी जमीनें दखल की हैं वे विवादग्रस्त जमीनें हैं। वनभूमि, सड़कों की जमीनें भी इनमें शामिल हैं। सी.एन.टी. एक्ट और 5वीं अनुसूची का उल्लंघन करके जमीनें कब्जा की गयी हैं। 24 सितम्बर 2012 को आयोजित की गई जन सुनवाई को प्रखंड के लोगों पर जबरदस्ती थोपा गया है। यह सरासर धांधली है। हम इसका हर स्तर पर विरोध करते हैं।

{इस जन सुनवाई के संदर्भ में प्रखंड के लोगों की आपत्तियों को अगले पेज पर दिये गये ज्ञापन में पढ़ें।}

– कुमार चंद मार्डी

सेवा में,

सचिव महोदय

पर्यावरण एवं वन मंत्रालय

भारत सरकार, नई दिल्ली,

विषयः विगत 24 सितम्बर 2012 को पूर्वी सिंहभूम (झारखण्ड) में स्थित पोटका में भूषण पावर एवं स्टील कम्पनी कि जनसुनवाई के सम्बन्ध में।

महोदय,

हम पोटका अंचल में अवस्थित गाँव – गणराज्य एवं विस्थापित विरोधी एकता मंच, विभिन्न ग्राम सभाओं के सदस्यों द्वारा उपरोक्त विषय पर आप का ध्यान आकृष्ट करते हुए निम्नलिखित तथ्यों को आप के समक्ष प्रस्तुत करते हैं कि–

1. यह क्षेत्र आदिवासी बाहुल्य क्षेत्र होने के कारण तथा संविधान में उल्लेख 5वीं अनुसूची क्षेत्र के रूप में मान्यता दिया गया है। यह सामान्य कानून से वर्जित क्षेत्र है जहाँ CNT Act, Rural Police Act, विल्किल्सन रूल्स, समता जजमेंट, रामी रैड्डी जजमेंट, पेसा कानून आदि महत्वपूर्ण कानूनों का प्रावधान है।
2. यहाँ जमीन की खरीद–बिक्री पर सख्त पाबन्दी है तथा जमीन का हस्ताक्षर किसी भी कीमत पर नहीं होता है। अतः टाटा स्टील जैसे बड़ी कम्पनी भी इस क्षेत्र में अभी तक जमीन नहीं खरीद सकी है, तो भूषण स्टील की बात कहाँ से आती है।
3. RTI के तहत् श्री सुनील कुमार सिंह भू अर्जन पदाधिकारी, आदित्यपूर, जमशेदपूर Qr. No 257/2/3 Road No&6 Adityapur ने अपने ज्ञापन सं0206 / भू0 अ0 दिनांक 19.09.2012 द्वारा जानकारी प्रदान किया गया कि (अ) भूषण कम्पनी के लिए अभी तक जमीन का अधिग्रहण नहीं हुआ है। (ब) वर्तमान में कम्पनी के डव् विस्तार से सम्बन्धित प्रमाण पत्र अप्राप्त है। (स) प्रमाणित ग्राम रोलाडीह, पोटका, जुड़ी, खड़ियासाई, टांगोर साई के लिए कार्रवाई की जा रही हैं।
4. यहाँ भूषण कम्पनी के नाम जमीन ही नहीं है तो यह जन सुनवाई का कारवाई कैसे किया गया।
5. इस पत्र में कोई पत्रांक संख्या एवं तिथि अंकित नहीं है तथा सदस्य सचिव के हस्ताक्षर पर भी कोई तिथि अंकित नहीं है। इससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि यह महज एक फर्जी नोटिस है जिससे भोले – भाले आदिवासी जनता को गुमराह करने का कोशिश किया गया है।
6. उपरोक्त नोटिस स्थानीय दैनिक प्रभात खबर, जमशेदपुर एडीशन तिथि 25 अगस्त 2012 को जनसुनवाई के लिए प्रकाशित किया था।
7. जनसुनवाई के एक दिन पूर्व 23 सितम्बर 2012 को पोटका थाना प्रभारी अंचल अधिकारी संजय संडिल द्वारा प्रभावित क्षेत्र के पोटका अन्तर्गत रोलाडीह ग्राम में अपनी पूरी टीम के साथ बन्दुक, कारबाईन, तथा आधुनिक हाथियार से लैस होकर भोले – भाले निहत्थे ग्रामीणों को जान से मारने का धमकी दिया कि यदि वे आगामी जनसुनवाई में जायेंगे तो उन्हें गोली से भून दिया जायेगा।
8. उक्त जनसुनवाई में भाग लेने हेतु आस–पाड़ोस के ग्रामीण उस दिन शान्तिमय लोकतांत्रिक प्रक्रिया के तहत् भूषण पावर स्टील के खिलाफ अपना विरोध प्रदर्शन कर रहे थे। वैसी स्थिति में भी पुलिस बल ने निहत्थे ग्रामीणों, आदिवासियों एवं महिलाओं के ऊपर लाठी – चार्ज किया तथा रिवल्वर तान कर गोली मारने की धमकी दी। अतः ऐसी जनसुनवाई का क्या औचित्य होगा।

पता चला है कि भूषण पावर एवं स्टील कम्पनी को उद्योग बैठाने के लिए झारखण्ड राज्य प्रदुषण नियंत्रण कंट्रोल पर्षद द्वारा किसी प्रकार का अनियमित प्रमाण पत्र नहीं दिया गया है। भूषण कम्पनी ने जिस स्थान पर चहारदीवारी का निमार्ण किया है, वह जमीन भी उसके नाम पर नहीं है। पता चला है कि उस जमीन को पी0 डब्ल्यू0 डी0 विभाग द्वारा हाता – मुसाबनी मार्ग के लिए भू अद्यिग्रहण किया गया है और भूषण कम्पनी ने गैर कानूनी ढंग से दीवाल निमार्ण किया है।

यह भी ज्ञात हुआ कि स्थानीय पोटका गाँव निवासी श्री उत्पल मंडल और अन्य 93 ग्रामीणों के रैयती जमीन को भी अवैध रुप से चहारदीवारी के अन्दर रख लिया है। इस विषय पर श्री उत्पल मंडल ने पोटका अंचल के अंचलाधिकारी को विगत 2 सितम्बर 2011 को पत्राचार कर अवगत कराया है.

अतः आप से अनुरोध है कि आप अपने स्तर में उक्त विषय पर हस्तक्षेप कर उचित कार्रवाई करने की कृपा करें।

धन्यवाद !

आपका विश्वासी

कुमार चंद मार्डी

तमिलनाडु

कुडनकुलम : बर्बर दमन के बीच जारी जनांदोलन को देश भर से समर्थन

कुडनकुलम में परमाणु–रिएक्टर के खिलाफ चल रहा आंदोलन निर्णायक दौर में पहुँच गया है. पिछले महीने की शुरुआत में परमाणु बिजलीघर के अंदर यूरेनियम ईंधन डालने की घोषणा के बाद आंदोलन तेज हुआ है और अदालती स्तर से लेकर देश भर में व्यापक जन–समर्थन जुटाने तक की पुरजोर कोशिश जारी है.

मद्रास उच्च न्यायालय में रिएक्टर परियोजना को रोकने की अर्जी खारिज होने के बाद परमाणु ऊर्जा कार्पोरेशन ने जहां तत्काल कुडनकुलम में ईंधन भरने की घोषणा कर दी, वहीं आंदोलन के समर्थकों ने सर्वोच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाने के साथ ही जमीन पर आंदोलन तेज कर दिया. 9 सितम्बर को लगभग बीस हजार लोग कुडनकुलम परमाणु रिएक्टर की पूर्वी दीवार के पास प्रदर्शन करने को पहुंचे तो सरकार पुलिसिया दमन पर उतारू हो गई. 10 सितम्बर को शांतिपूर्ण प्रदर्शन कर रहे हजारों मछुआरों, महिलाओं और बच्चों पर बर्बर ढंग से लाठी–चार्ज किया गया है और आंसू गैस के गोले दागे गए. इस हमले से बचने का एकमात्र जरिया समुन्दर में कूदना था. पूरे दिन चले इस पुलिस हमले में जहां एक मछुआरे की गोली लगाने से तत्काल मृत्यु हो गयी, वहीं अगले दिन से शुरू हुई हवाई पेट्रोलिंग में एक और व्यक्ति की आघात से मौत हो गयी. लगातार कई दिनों तक पुलिस खुलेआम इदिन्थाकराई और अन्य निकटवर्ती गांवों में लोगों को प्रताडित करती रही. कम–से–कम पचास लोग इस हमले में बुरी तरह घायल हुए और सौ से अधिक लोगों को गिरफ्तार कर लिया गया. गाँव के अंदर घुसकर पुलिस ने मछुआरों के घरों और नावों को तोड़ दिया. महिलाओं, बूढों और बच्चों तक को नहीं बख्शा गया. पुलिस ने आंदोलन के शीर्ष नेता एस.पी.उदयकुमार को गिरफ्तार करने का बहाना बना कर यह उत्पात कई दिनों तक मचाया. लेकिन आंदोलन ऐसे वीभत्स दमन के बावजूद थमने का नाम नहीं ले रहा है. जब खुद एस.पी.उदयकुमार ने अपने आप को पुलिस को सौंपने की घोषणा की तो स्थानीय लोग उन्हें सुरक्षित स्थान पर ले गए और उनकी गिरफ्तारी से मना कर दिया.

मुंबई उच्च न्यायालय के पूर्व–न्यायाधीश बी.जी. कोलसे–पाटिल की अगुवाई में एक स्वतंत्र जांच दल ने कूडनकुलम में हुए पुलिसिया दमन पर अपनी विस्तृत रिपोर्ट में सरकारी कारवाई की भर्त्सना की और इस बर्बर दमन का पूरा ब्योरा प्रकाशित किया. इस परियोजना में पर्यावरणीय सवालों और लोगो के जीवनयापन तथा सुरक्षा के सरोकारों की पूरी तरह अनदेखी हो रही है. आंदोलन से जुड़े आठ हजार लोगों पर सरकार ने देशद्रोह के मुकदमे लगा दिए हैं. बुजुर्ग और बच्चे तक देशद्रोह के आरोप का सामना कर रहे हैं.

पूरे देश के जन–संगठन, जनपक्षीय पार्टियों और कई वरिष्ठ बुद्धिजीवी इस दमन के खिलाफ खुलकर सामने आए. दिल्ली मंत जंतर मंतर, इंडिया गेट और तमिलनाडु भवन के सामने लोगों ने अपना विरोध जताया. ऐसे ही विरोध–प्रदर्शन चेन्नई, मुंबई, कलकत्ता, हैदराबाद, पुणे, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, राजस्थान और तमिलनाडु के कई छोटे–बड़े शहरों में भी हुए.

11 सितम्बर 2012 को तीन हजार आम लोग कूडनकुलम में समुद्र के पानी में 'जल सत्याग्रह' शुरू किया। परमाणु रिएक्टर परियोजना को खुद पर थोपे जाने और इसके खिलाफ चल रहे आन्दोलन के कार्यकर्ताओं पर बर्बर पुलिसिया दमन के विरोध में महिलाएं, बच्चे और साधारण मछुआरे इस सत्याग्रह में हिस्सा ले रहे थे.

इस दमन के खिलाफ और जनांदोलन के समर्थन में महाश्वेता देवी, अरुंधती राय, अरविंद केजरीवाल आदि प्रमुख सामाजिक हस्तियाँ तथा कई मानवाधिकार संगठन खुलकर सामने आए.

12 सितम्बर 2012 को कुडनकुलम के समर्थन में लखनऊ में विरोध–प्रदर्शन हुआ. जिसमे मांग की गई कि सरकार

देश के नागरिकों से अपील

तमिलनाडू के दक्षिणी छोर पर स्थित तिरुनेलवेली जिले में निर्माणाधीन कूडनकुलम परमाणु परियोजना का विरोध पिछले पचीस वर्षों से चल रहा है जिसमें पिछले एक साल से, फुकुशिमा दुर्घटना के बाद,जबरदस्त तेजी आई है.

आंदोलनरत स्थानीय लोगों का कहना है कि इस परियोजना में पर्यावरणीय सवालों और लोगो के जीवनयापन तथा सुरक्षा के सरोकारों की पूरी तरह अनदेखी हो रही है. आंदोलन से जुड़े आठ हजार लोगों पर सरकार ने देशद्रोह के मुकदमे लगा दिए हैं.

रिएक्टर परियोजना के खिलाफ जायज मांगों पर संघर्ष कर रहे लोगों पर निर्मम पुलिसिया दमन में अबतक दो जानें जा चुकी हैं, कम–से–कम पचास लोग बुरी तरह जख्मी हैं, और तकरीबन नब्बे लोग गिरफ्तार हैं, जिनमें महिलाएं भी शामिल हैं.

हम आपसे अपील करते हैं अपने स्तर पर इस दमन का विरोध करें और अपनी जीविका, सुरक्षा तथा हक के लिए लड़ रहे लोगों के पक्ष में खड़े हों. अधिक जानकारी और सहयोग के लिए संपर्क करें।

People's Movement Against Nuclear Energy
(PMANE)
Idinthakarai & P. O. 627 104
Tirunelveli District, Tamil Nadu
Phone: 98656 83735; 98421 54073
koodankulam@yahoo.com
pushparayan@gmail.com

कुडनकुलम ही नहीं बल्कि जैतापुर, महाराष्ट्र, मीठी विर्डी, गुजरात, गोरखपुर, हरियाणा, चुटका, मध्य प्रदेश, कोवाडा, आंध्र प्रदेश, आदि, जहां–जहां नाभिकीय बिजली घर लगाना चाह रही है अपनी योजना वापस ले।

15 सितम्बर 2012 को कुडनकुलम के परमाणु संयत्र विरोधी आंदोलन पर किये जा रहे दमन के खिलाफ रावत भाटा परमाणु संयत्र के श्रमिकों ने अपनी नाराजगी जाहिर की. अणु शक्ति डी आर मिक संघ (रावत भाटा) श्रमिक हितों के लिये परमाणु संयंत्र प्रबंधन की मनमानियों से जूझ रहा है. श्रमिक संघ ने इस संदर्भ में प्रधानमंत्री को भी पत्र लिखा. जिसकी शुरुआत कुडनकुलम के बेकसूरों के साथ किये जा रहे अन्याय की निंदा से की गयी है.

16 सितम्बर 2012 को केरल से कुडनकुलम आंदोलन के सैकड़ों समर्थकों ने त्रिवेंद्रम से कुडनकुलम तक विरोध–मार्च निकाला जिसे तिरुनेलवेली और कन्याकुमारी में पुलिस के द्वारा रोक लिया गया और इन कार्यकर्त्ताओं को गिरफ्तार कर लिया गया.

17 सितम्बर 2012 को मछुआरों के राष्ट्रीय संगठन ने पूरे देश में हडताल का आयोजन किया.

19 और 20 सितम्बर को मुंबई उच्च न्यायालय के पूर्व–न्यायाधीश बी.जी. कोलसे–पाटिल की अगुवाई में एक स्वतंत्र जांच दल ने कुडनकुलम का दौरा किया.

28 और 29 सितम्बर को दिल्ली में आयोजित 'फर्जी केसों पर राष्ट्रीय जनसुनवाई' में भी कुडनकुलम में हुए दमन और हजारों फर्जी केसों का मामला उठाया गया. इस सुनवाई में आए बिनायक सेन जैसे मानवाधिकार कार्यकर्ताओं ने तमिलनाडु सरकार की निदा की.

इस बीच प्रशांत भूषण ने सर्वोच्च न्यायालय में कुडनकुलम का मामला उठाया और वहाँ हुए प्रावधानों की अवहेलना को केंद्र में रखते हुए रिएक्टर के उदघाटन को रोकने की मांग की है. परमाणु ऊर्जा नियमन बोर्ड ने मद्रास हाईकोर्ट में शपथपत्र देकर 17 सुरक्षा–शर्तों पर कारवाई होने के बाद ही रिएक्टर के शुरू होने को मंजूरी देने की बात कही थी. लेकिन उच्च न्यायालय में वह अपनी बात से मुकर गया है और यह कहा है कि उक्त 17 सुरक्षा–शर्तें बाध्यकारी नहीं है बल्कि मात्र सुझाव–भर है. लेकिन एक फौजी का फौज

ऐसे जाबांज सिपाही को सलाम!

छोड़ कर भ्रष्टाचार और खनन माफिया के खिलाफ जंग छेड़ना व्यवस्था के मुंह पर जोरदार तमाचा है। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि जिसने दुश्मन फौज के दांत खट्टे किये, उसे अपने गांव में देशी दुश्मनों से भिड़ना पड़ रहा है। इधर ऐसे कई मामले सामने आये हैं कि एक तरफ कोई फौजी देश की सीमाओं की रक्षा पर तैनात है और दूसरी तरफ उसकी जमीन–जायदाद पर कब्जा हो गया था कि उसका परिवार भ्रष्ट और निर्मम तंत्र का शिकार हो गया।

यह घटना इशारा करती है कि कानून का राज बहुत कम. जोर हो चला है। पूरे तंत्र पर धनबल और बाहुबल का कब्जा है कि जिसकी लाठी, उसकी भैंस। यह लोकतंत्र को अपनी मर्जी से हांकना और देश को भी खतरे में डालना है।

— सुंदरम

राजस्थान

पहाड़ी बचाने के मोर्चे पर फौजी

जयराम– सीकर जिले के नीम का थाना तहलील के डाबला गांव के हैं।. वह भारतीय सेना की राजपूताना राइफल की दूसरी रेजिमेंट में नायक थे। कारगिल की लड़ाई में उन्होंने इक्कीस साथियों को खोया। उन्हें भी दो गोलियाँ लगीं और वह बुरी तरह घायल हुए तो भी जयराम ने तोलोलिंग पहाड़ी पर तिरंगा फहरा दिया। इसके लिए उन्हें राष्ट्रपति के हाथों वीरता चक्र का पुरस्कार मिला।

वीरता चक्र विजेता जयराम डाबला गांव में छुट्टी आता है तो देखता है की डाबला में दिन रात उडती रेत की धुल, पत्थर ले कर 24 घंटे आते जाते बड़े बड़े डम्फर, ब्लास्टिंग से उड़ कर गिरते बड़े बड़े पत्थर, खान से रोजाना निकलती मिटटी से बनते पहाड़ यह सब मिल कर डाबला को जोखिम और रोगों की हृदयस्थली बना रहे हैं.

छुट्टी पर जयराम अपने गांव आये तो उन्होंने देखा कि डाबला की सूरत तो बहुत बिगड़ चुकी है। गांव के ठीक बगल में चौबीसों घंटा पत्थर के खनन का काम चल रहा है। इलाके को दहलाते हुए जब–तब ब्लास्टिंग होती रहती है। पूरे गांव पर रेत–धूल की बारिश और पत्थरों को ढोने के लिए बड़े डम्फरों की आवाजाही लगातार चलनेवाला सीन है। खनन से निकलनेवालर मिट्टी के टीले खड़े होते जा रहे

हैं। चौतरफा जोखिम है और रोगों का जमावड़ा है। कुला मिला कर कहें तो गांव के अमन–चैन पर खनन माफिया का हमला है।

जयराम सेना में इस भावना से भरती हुए थे कि उन्हें देश की रक्षा करनी है। लेकिन अब अपने गांव की रक्षा करने की जिम्मेदारी से कैसे मुंह मोड़ लेते? उन्होंने खनन माफिया से लोहा लेने की ठानी और इसके लिए लोगों को संगठित करना शुरू कर दिया। सक्रियता बढ़ी तो उन्हें फर्जी मुकदमों में फंसा दिया गया ताकि वह थक–हार कर चुप बैठ जायें। लेकिन जयराम ने पीछे हटने के बजाय सामना करने का फैसला लिया। इसके लिए फौज की नौकरी से हमेशा के लिए छुट्टी ले ली। अब वह अपने गांव की पहाड़ी को बचाने के मोरचे पर तैनात है।

ऐसे जाबांज सिपाही को सलाम!

छोड़ कर भ्रष्टाचार और खनन माफिया के खिलाफ जंग छेड़ना व्यवस्था के मुंह पर जोरदार तमाचा है। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि जिसने दुश्मन फौज के दांत खट्टे किये, उसे अपने गांव में देशी दुश्मनों से भिड़ना पड़ रहा है। इधर ऐसे कई मामले सामने आये हैं कि एक तरफ कोई फौजी देश की सीमाओं की रक्षा पर तैनात है और दूसरी तरफ उसकी जमीन–जायदाद पर कब्जा हो गया था कि उसका परिवार भ्रष्ट और निर्मम तंत्र का शिकार हो गया।

यह घटना इशारा करती है कि कानून का राज बहुत कम. जोर हो चला है। पूरे तंत्र पर धनबल और बाहुबल का कब्जा है कि जिसकी लाठी, उसकी भैंस। यह लोकतंत्र को अपनी मर्जी से हांकना और देश को भी खतरे में डालना है।

— कैलाश मीणा

राजकीय दमन के खिलाफ सम्मेलन का आयोजन

22 सितम्बर 2012 को जयपुर में राज्य पीयूसीएल की ओर से प्रदेश में जल, जगंल, जमीन, अवैध खनन, मानवाधिकारों के हनन व सांप्रदायिकता के खिलाफ चल रहे जनांदोलनों की आवाज को कुचलने के लिए लगातार राजस्थान सरकार संघर्ष के नेतृत्वकारी कार्यकर्ताओं पर झूठे मुकदमे दर्ज कर जेल में डालने का प्रयास कर रही है। राज्य के इस दमन चक्र से कैसे जनादोलनों के कार्यकर्ताओं को बचाया जाये और सरकार की इस दमनकारी नीति से कैसे निपटा जाये आदि विषयों पर सहभगियो ने गंभीरता पूर्वक विचार–विमर्श कर संयुक्त संघर्ष करने पर जोर दिया और पीयूसीएल की बदली हुई परिस्थियों में नई दिशा व भूमिका पर विचार हुआ।

सम्मेलन में विभिन्न जिलों से आये प्रतिनिधियों ने अपने अपने क्षेत्र की स्थितियों को रखा। गांव डाबला तहसील नीमकाथाना के साथी जयरामसिंह ने बताया कि अवैध खनन के खिलाफ चल रहे आन्दोलन के कार्यकर्ताओं के खिलाफ स्थानीय पुलिस थाना खनन माफिया के इसारे पर 11 झूठे मुकदमें दर्जकर प्रताड़ीत कर रहा है। यही नहीं हमारे आन्दोलन के प्रमुख साथी कैलाश मीणा और सावरमल यादव को डाबला ग्राम के इलाके में आने–जाने पर भी नीमकाथाना के तहसीलदार ने शांन्ति भंग की धाराओं के अन्तर्गत पाबंद कर दिया है। लेकिन इन सब दमनात्मक कार्यवाहियों के बावजूद भी हमारा जल, जंगल व जमीन बचानें का संघर्ष तीखा होता जा रहा है और जनभागीदारी भी बढ़ती जा रही है। इसके अलावा नवलगढ़ भूमि बचाओं संघर्ष समिति के नौजवान साथी ने पिछले ढ़ाई साल से चल रहे आन्दोलन के बारे में आये उतार–चढ़ाव के बारे में बताया कि कैसे सी. मेंट कम्पनियां, स्थानीय अमेले, पुलिस– प्रशासन के गठजोड द्वारा जमीन बचाने के संघर्ष को तोड़ने का प्रयास किया जा रहा है। पीयूसीएल के राज्य उपाध्यक्ष व सामाजिक कार्यकर्ता अलवर के मोलाना जी ने मेवात में साम्प्रदायिक सौहार्द को कांग्रेस सरकार के स्थानीय नेताओं के इसारे पर बिगाड़ जाने की स्थिति के बारे में बताते हुए कहा कि 'मुझ जैसे सामाजिक कार्यकर्ता पर स्थानीय पुलिस ने झूठा मुकदमा दर्ज कर गिरप्तार करने के लिए पीछे पड़ी है। सिर्फ मेरा दोष यह है कि हमने गोपालगढ़ का.ड में निर्दोष मारे गये 10 मुस्लिम भाइयों के हत्यारे पुलिस कर्मयों को गिरफ्तार करने की मांग करने हेतु मीटिंग करने का प्रयास कर रहे थे।'

इस सम्मेलन के मुख्य अतिथि वरिष्ठ अधिवक्ता व पी–यू–सी–एल– के राष्टीय उपाध्यक्ष रवि किरण जैन, राज्य अध्यक्ष प्रेमकृष्ण शर्मा, गांधीवादी नेता व पीयूसीएल के राज्य सचिव सवाईसिंह, दलित अधिकार केन्द्र के पी एल मीमरोठ, इंसाफ से विरेन्द्र विद्रोही, मजदूर नेता हरकेश बुगालिया, बी बी सी रेडियो के संवाददाता नारायण बाहरीठ आदि ने भावी र.ानीति के संदर्भ में अपने विचार रखे। पीयूसीएल की राज्य महासंचिव कविता श्रीवास्तव ने संगठन के द्वारा किये जा रहे कार्यकलापों के बारे में विस्तारपूर्वक अपनी रिर्पोट रखी।

— हरकेश उर्फ मेहनतकश बाबा

बसगुड़ा कांड : खूनी चेहरे के रंग–रोगन की कवायद

बसगुड़ा नर संहार का सच सामने आने के बाद सरकार ने अपनी छीछालेदर से बचने के लिए नया पैंतरा चला कि माओवादी आदिवासियों को अपनी ढाल बना रहे हैं। यह रिपोर्ट इस सफेद झूठ की चीरफाड़ करते हुए इसे वर्दीधारी गुंडों के अगले अत्याचारों को जायज ठहराने की घिनौनी रणनीति करार देती है। साथ ही यह खुलासा भी करती है कि सरकारी तंत्र किस तरह पत्रकारों को अपनी कठपुतली बनाने का काम करता है, सहूलियतों और लालच के सहारे उन्हें अपनी जुबान बंद रखने का बंदोबस्त करता है। पेश है आदियोग की यह रिपोर्ट।

गृह मंत्रालय ने सुरक्षा बलों को निर्देश दिया है कि अगर माओवादी किसी मुठभेड़ में महिलाओं और बच्चों को ढाल बनाते हैं तो वे उनसे भिड़ते समय पूरी एहतियात बरतें, और अगर बेगुनाहों की जान को खतरा दिखे तो उनसे मुठभेड़ करने से बचें। यह निर्देश पिछली 29 जून को बीजापुर जिले में 'माओवादियों से हुई मुठभेड़' के एक पखवारा बाद जारी हुआ जिसमें 17 लोगों की जानें गयी और जिसे स्वतंत्र जांच दलों के अलावा घटना स्थल तक पहुंचे मीडिया के एक हिस्से ने भी फर्जी मुठभेड़ का नाम दिया था। सच को बाहर आने में देर नहीं लगी और सरकार कटघरे में खड़ी हो गयी। यह निर्देश इसी रोशनी में है।

यह निर्देश एक तीर से कई निशाने साधने की गरज से है। यह 28 जून को हुई खूंरेजी में वर्दी पर पड़ रहे छींटों को हल्का करने और लगे हाथ अपने पिछले पापों को भी धोने की जुगत है। यह माओवादियों की उस छवि पर हमला करने का नया हथियार है जिसमें वे आदिवासियों के हमदर्द और उनके हित–अधिकारों के लिए लड़नेवाले योद्धा नजर आते हैं। माओवादियों का चेहरा बदरंग दिखेगा तो जाहिर है कि सरकार और सुरक्षा बलों का पलड़ा भारी होगा। यह कवायद कुछ इस तरह से है कि देखिये साहब, माओवादी इतने कायर होते हैं कि जिन आदिवासियों के पक्ष में खड़े होने का दावा करते हैं, सुरक्षा बलों के हमले से बचने के लिए उन्हीं को अपनी ढाल बना लेते हैं।

कि उनमें इतना दम नहीं कि सुरक्षा बलों से सामना कर सकें। कि इससे पता चलता है कि माओवादी कितने खुदगर्ज हैं और आदिवासियों के कट्टर दुश्मन हैं। कि बिचारे भोले–भाले आदिवासी तो उनकी चाल में फंस–पिस रहे हैं। कि सरकार उन्हें आदिवासियों के चंगुल से छुड़ाने और उन्हें विकास की मुख्यधारा से जोड़ने की हर मुमकिन कोशिशों में लगी हुई है। कि इसके लिए सुरक्षा बलों को मुश्किल हालात में काम करना पड़ता है, अपनी जान जोखिम में डाल कर भारी चुनौतियों से जूझना पड़ता है। कि देश के लोगों को इसे समझना चाहिए और सुरक्षा बलों का मनोबल नहीं गिरने देना चाहिए। कि माओवादियों के सफाये में सरकार के साथ खड़े होना चाहिए।

28 जून की रात छत्तीसगढ के तीन सुदूर गांवों में वर्दी पहन के आयी दरिंदगी ने ख़ौफ और दहशत का कभी न भुलाया जा सकनेवाला मंजर पेश किया। 29 जून की सुबह तक चले इस खूनी सिलसिले के तुरंत बाद पी. चिदंबरम ने नयी दिल्ली में पत्रकारों को यह पक्की ख़बर दी कि बीजापुर जिले में सीआरपीफ के साथ हुई मुठभेड़ में 17 दुर्दांत माआ. वादी ढेर कर दिये गये। उन्होंने इसे माओवादियों के ख़िलाफ़ जारी सरकारी मुहिम की बड़ी उपलब्धि करार दिया और इसके लिए सीआरपीएफ के साहस और कौशल की तारीफ की। लेकिन अगले दिन ही उन्हें फर्जी मुठभेड़ की खुलती परतों के बीच अपने बयान को थोड़ा बदलना पड़ा कि अगर सचमुच कोई ऐसा बेगुनाह मारा गया है जिसका माओवादियों से किसी तरह का रिश्ता नहीं था तो इसका हमें अफसोस है।

बच्चों और महिलाओं की लाशों की तसवीरें ही सबसे बड़ी गवाही है कि चिदंबरम की ख़बर कितनी कच्ची और सरासर झूठ थी। तो भी उन्होंने ढिठाई से कहा कि यह सच्चाई तो जांच के बाद ही सामने आ सकेगी कि क्या कोई बेगुनाह भी मारा गया। यह कहां का क़ायदा है कि रायपुर से मिली सूचना को बिना तौले–परखे पक्की ख़बर बता कर प्रसारित कर दिया जाये और जब उस पर सवाल खड़े हों तो उसे जांच के नाम पर टाल दिया जाये। यह जम्हूरी निजाम के हिटलरी हुक्मरानों का अंदाज है।

सीआरपीएफ केंद्रीय गृह मंत्रालय के अधीन काम करती है और चिंबरम साहब इस मंत्रालय के मुखिया रहे हैं। इस हैसियत से उन्होंने देश के सामने 28 जून को सीआरपीएफ के हाथ लगी बड़ी कामयाबी को उजागर किया था। भले ही चिदंबरम साहब फिलहाल इसे न मानें लेकिन अब जबकि इस कामयाबी की असलियत पर ही शुबहा है और जिसमें सीआरपीएफ का दहशतगर्द और बर्बर चेहरा दिखता है तो गृह मंत्री को मामले की जांच किये जाने का एलान करना

चाहिए था। लेकिन जांच दल के गठन के बावत उन्होंने यह कहते हुए अपनी जिम्मेदारी से पल्ला झाड़ लिया कि यह काम छत्तीसगढ सरकार का है, वह इसकी जरूरत समझेगी तो जांच दल का गठन करेगी।

अब जांच दल के गठन को किक मारने की बारी रमन सरकार की थी। दिल दहला देनेवाली इतनी बड़ी वारदात की जांच का काम भोपालपटनम तहसील के सब दिवीजल मजिस्ट्रेट आरए कुरूवंशी को सौंप दी गयी और मजिस्ट्रेट साहब ने साफ कर दिया कि उनका घटनास्थल का दौरा करने का इरादा नहीं है– कि जिनको अपना बयान दर्ज कराना हो, 9 जुलाई को उनके दफ्तर पहुंचे। यह कैसी जम्हूरियत है कि जहां जुल्म के मारे, दुख और सदमे में सरापा भीगे–ठिठुर रहे लोगों से कहा जाता हो कि अपनी फरियाद लेकर फलां दिन दरबार में हाजिर हों। उनकी शिक़ायतें सुनने के लिए साहब हुजूर इतनी दूर जाने की जहमत क्यों उठायें?

लेकिन उन्हीं साहब हुजूर को गांव का दौरा लगाना पड़ा– जांच के लिए नहीं, गांववालों के बीच दैनिक जरूरतों का सामान बांटने के लिए। देश–दुनिया में हो रही थूथू को देखते हुए राज्य सरकार को अपनी रहमदिली दिखाने की सुध आयी। ऊपर से आदेश मिला तो साहब हुजूर सामानों से भरा ट्रक लेकर कोट्टागुड़ा पहुंचे। लेकिन गांववालों ने यह कहते हुए सरकारी राहत को ठुकरा दिया कि 'तुमने हमारे लोगों को मारा, बच्चों तक को नहीं छोड़ा और उन्हें माओवादी बताया तो माओवादियों की मदद क्यों? यह गुस्सा ही उनका सबसे ठोस बयान है कि उनकी आत्मा पर इतना गहरा जख़्म हुआ कि कोई मलहम उसे सुखा नहीं सकता, कि उन्हें सरकार से कोई उम्मीद भी नहीं है, कि सरकार ही उनके साथ हुए जुल्म की गुनाहगार है। आदिवासी अनपढ़ हो सकते हैं लेकिन सदियों से ख़ुद्दारी का पाठ पढ़ते रहे हैं। वे सहज–सरल होते हैं लेकिन दोस्त और दुश्मन के बीच फर्क़ करना ख़ूब जानते हैं। सरकारें इसे क्या जानें?

मसले के तूल पकड़ने पर सीआरपीएफ के डीजी के. विजय कुमार ने कहा था कि सीआरपीएफ कोई अनुशासनहीन और गैर जिम्मेदार इकाई नहीं है। लेकिन इस सवाल से घिरने पर कि उसमें तो बेगुनाह लोग मारे गये, उनका बेशर्म जवाब था कि 'माओवादी अगर महिलाओं और बच्चों को अपनी ढाल बनाते हैं तो हम क्या कर सकते हैं? गोलियां अंधी होती हैं, लिंग और उम्र में फर्क करना नहीं जानतीं। वैसे भी 29 जून की रात बहुत अंधेरी थी।' पहली बात तो यह कि वह चांदनी रात थी और अगर अंधेरी भी थी तो बाहर से ख़रीदी गयीं उन मंहगी और कीमती दूरबीनें क्या कर रही थीं जो घुप्प अंधेरे में भी बहुत साफ देख लेती हैं? बेशक, गोलियां अंधी होती हैं अगर आंख मूंद कर दागी जायें। अव्वल तो गोलियां खुद नहीं दगतीं, उन्हें दागा जाता है। यह काम बंदूकधारियों के हाथ करते हैं, और हाथ दिमाग और आंख के तालमेल से काम करते हैं। यह फौजी अनुशासन है कि दिमाग का इस्तेमाल उतना ही किया जाये जितना हुक्म बजाने के लिए जरूरी हो और आंखें भी उतना ही देखें जो इसे मुकम्मल बनाने के लिए जरूरी हो। यहां दिल का कहा मानने की मनाही है।

पुलिस हो या कि सीआरपीएफ, वह तो सरकार की लाठी है। इस बेरहम लाठी को क्यों कोसें? उसे तो बनाया ही इसलिए गया है कि जब और जहां जरूरत पड़े, भांजा जा सके। लाठी सोचने–विचारने का काम नहीं करती। यह काम उसे थामनेवाले का होता है। नहीं भूला जाना चाहिए कि पुलिस का गठन गोरी हुकूमत ने किया था और इसका मक़सद लोगों के जान–माल की हिफाजत करना नहीं था। 1857 की सशस्त्र क्रांति के बाद बने जांच आयोग की सिफा. रिशों के आधार पर उसे खड़ा किया गया था ताकि ऐसे किसी अगले जन उभार को समय रहते कुचला जा सके।

ख़बर है कि जिस रात सीआरपीएफ के जवानों ने आदिवासियों पर हमला कर अपनी 'वफादार मर्दानिगी' का सबूत दिया, उसी दिन बीजापुर के तमाम पत्रकारों को सरक. ारी ख़र्च पर वातानुकूलित लग्जरी बस से सैर–सपाटे के लिए हैदराबाद रवाना कर दिया गया था। यह योजना दुर्ग में तैनात एसटीएफ के राजेंद्र नारायण दास ने तैयार की थी जो बीजापुर का एसपी रह चुका है। पत्रकारों पर हुई इस सरकारी इनायत को आदिवासियों पर बरपा की गयी हैवानियत की पटकथा से जोड़ कर क्यों न देखा जाये? पहरेदारों की गैर हाजिरी में चोर, उचक्के, लुटेरे और हत्यारे की पौ बारह होती है। इसके लिए पहरेदारों को तैयार भी किया जा सकता है, बहला–फुसला कर या डरा–धमका कर। इसे महज संयोग नहीं माना जा सकता कि इधर पत्रकारों ने जिले से कूच किया और उधर वहशियत का खूनी खेल हुआ।

इससे समझा जा सकता है कि स्थानीय मीडिया में राज्य दमन से जुड़ी खबरों को जगह क्यों नहीं मिल पाती या कि मिलती भी है तो सरकारी जुबान में ही क्यों? यह सरकार और प्रशासन के मीडिया मैनेजमेंट का करिश्मा है। खरीदा उसे जाता है जो बिकाऊ होता है। यहां तो बीजापुर ही नहीं, पूरे छत्तीसगढ़ में उनकी लंबी सूची है। लेकिन अपवाद कहां नहीं होते? यहां भी हैं। कोट्टागुड़ा गांव में हुए नर संहार की घटना उन्हीं चंद पत्रकारों की निडर फुर्ती से बाहर आ सकी जो सरकारी दान–कृपा से दूरी रखते हैं और पत्रकारिता के उसूलों से समझौता नहीं करते। वाचडाग

की भूमिका से कट कर किसी का लैपडाग हो जाना गवारा नहीं करते।

पत्रकार की जिम्मेदारी है कि वह लोगों तक सच पहुंचाये। सच की तह तक जाने के लिए मेहनत करनी पड़ती है, निगाहें खुली रखनी होती हैं, लोभ और भय से बचना होता है और सच को जस का तस पेश करने के लिए जिगरा रखना होता है। इधर इस जज्बे और हौसले में तेजी से गिरावट आयी है। पत्रकारिता की दुनिया में ऐसे लोगों की फौज और उनकी पूछ बढ़ती जा रही है, जो भले ही पत्रका. रिता की बाकायदा पढ़ाई कर चुके हैं लेकिन दिल–दिमाग से अंगूठा टेक हैं। उनकी आंखें वही देखती हैं जिसे वे देखना चाहते हैं, उनके कान वही सुनते हैं जिसे वे सुनना चाहते हैं। गोया कि मीडिया में बुद्धि विरोधी मोरचा खुल गया हो जिसकी कमान संपादक जी के हाथ में हो।

लेकिन यह अधूरा सच है। पूरा सच तो यह है कि मीडिया में आजादी की लक्ष्मण रेखाएं पहले से खिंची होती हैं जिसे लांघना मुश्किल से हासिल की गयी नौकरी से हाथ धो बैठने का ख़तरा उठाना होता है। पत्रकारों की आजादी का दायरा मीडिया को चला रहे कारपोरेट समूहों के व्यापारिक हितों से तय होता है, सामाजिक हितों से नहीं। अगर किसी मीडिया समूह का उत्पाद केवल मुनाफा कमाने के लिए है, अपने उपभोक्ताओं को सही सूचना देने के लिए नहीं तो किस बात की ईमानदारी, कौन सी प्रतिबद्धता, कहां की संवे. दनशीलता और कैसे मूल्य? सच की जुबान पर बंदिश इस तरह लगती है और जनता को सजग बनाने की जिम्मेदारी दूर की कौड़ी हो जाती है।

मीडिया अक्सर अभिव्यक्ति की आजादी का सवाल उठाता है। अब यह सवाल कौन करे और कैसे कि साहब जी, आख़िर किसकी आजादी और कैसी आजादी? आख़िर मीडिया की आजादी का मतलब क्या? क्या सच को ढांक–झुठला कर झूठ परोसने की आजादी? क्या मुनाफे के लुटेरों का चेहरा चमकाने की आजादी? सरकार बहादुरों के धतकरमों पर परदा डालने की आजादी? नकली मुद्दों पर आग लगाने और असली मुद्दों को पीछे ढकेल देने की आ. जादी? भूख और जुल्म की मारी जनता की आहों से मुंह फेरने की आजादी? और इसके बदले ऐश और बेफिक्री हासिल करने की आजादी?

यह पाठकों, श्रोताओं और दर्शकों उर्फ मीडिया के उपभोक्ताओं का अधिकार है कि उन्हें किसी घटना, सवाल या मुद्दे को हर कोण से जांचने–परखने और उसके मुताबिक अपनी राय बनाने की सहूलियत मिले। यह तभी मुमकिन है जब उन्हें हर उस घटना, फैसले या प्रक्रियाओं की सही और पूरी जानकारी मिले जो उनके जीवन और समाज पर असर डालनेवाला हो या डाल सकता हो। किसी पक्ष को दबाने, तोड़ने–मरोड़ने या अधूरा रखने से यह मुमकिन नहीं। वैसे, गलत जानकारी से भली गैर जानकारी होती है जो कम से कम सनसनी और अफवाह को तो पैदा नहीं करती। अधकचरी जानकारी के आधार पर बना जनमत कभी सही नहीं हो सकता। माओवादियों और सरकार के बीच जारी भिड़ंत के मामले में भी यही बात लागू होती है। माओवादियों के नियंत्रण से बाहर के इलाक़ों में यह तसवीर बनाने की कोशिश है जिसमें माओवादी देश और समाज के लिए नासूर हैं, आतंकवाद का दूसरा चेहरा हैं। यह तसवीर गढ़ने में मीडिया का बड़ा हिस्सा सरकार का भरोसेमंद साथी दिखता है।

अकबर इलाहाबादी का यह शेर बहुत मशहूर है कि 'खींचो न कमानों को न तलवार निकालोध्जब तोप मुकाबिल हो तो अख़बार निकालो।' यानी ताकत के मामले में अखबार किसी तोप से कमतर नहीं होते। आजादी से पहले तमाम अख़बारों ने इसे साबित कर दिखाया और देश की जनता के साथ मिल कर गोरी हुकूमत को देश से खदेड़ देने में उल्लेखनीय भूमिका अदा की। जाहिर है कि इसकी उन्होंने भारी कीमत भी चुकायी। कुर्की, जेल, जुर्माना, शहर निकाला. ना जाने क्या–क्या झेला लेकिन अपने कदम पीछे नहीं किये।

तब अखबार कम थे और आज अखबारों की भरमार है। पहले अख़बार निकालने का मकसद जनता की आवाज बनना था। आज ज्यादातर अखबारों का मकसद दौलत कमाना है। खबरिया चौनलों का हाल तो और बुरा है। कुल मिला कर कहें तो पत्रकारिता में जन सरोकारों की जगह तेजी से घटती जा रही है। लगता है जैसे मीडिया के बड़े हिस्से में तोप से भिड़ने के बजाय उसका भोंपू बनने की होड़ मच गयी हो।

इस भगदड़ में सच कराह रहा है, सिसकियां भर रहा है। गांव के 15–16 साल के दो बच्चों ने इसी साल जनवरी में विशाखापत्तनम की यात्रा की थी। यह मौक़ा उनकी काबलियत का ईनाम था जिसका खयाल शायद उन्होंने सपने में भी नहीं बांधा होगा कि कभी वह इतने लंबे सफर पर निकलेंगे और समुंदर देखेंगे– किसी अजूबे की तरह। यह उनका अपनी सिमटी हुई दुनिया से बाहर निकलना था, समझना था कि दुनिया कित्ती बड़ी और दिलकश है और जिंदगी कितनी क़ीमती होती है। इस सुनहरे और यादगार सफर में न जाने कितनी मासूम ख्वाहिशें पैदा हुई होंगी, भविष्य के खूबसूरत सपने सजे होंगे। भले ही दोनों सफर पूरा कर अपनी दुनिया में लौट गये लेकिन नन्हीं उम्मीदें तो ऐसी मीठी यादों में जागती रहती हैं, अरसे तक ताजादम रहती हैं। आखिर 15–16 साल की कच्ची उम्र खुद ही

रूमानियत से भरी होती है। सपनों को अभी परवान चढ़ना था कि 29 जून की रात सीआरपीएफ की गोलियों ने सपना बुननेवाली आंखों को हमेशा की नींद में भेज दिया। दोनों किशोर हाई स्कूल के छात्र थे और बसगुड़ा में रह कर पढ़ाई कर रहे थे। गरमियों की छुट्टी में घर आये हुए थे और स्कूल वापसी की तैयारी में थे लेकिन माओवादियों के सफाये पर निकली सीआरपीएफ की टुकड़ी तो उनकी मौत का फरमान बन कर आयी थी। गोलियों की बौछार से उनके शरीर छलनी हुए और उसी दम उनके बेगुनाह सपनों का भी कत्ल हो गया। उसका मुवावजा कौन भर सकेगा।

छत्तीसगढ़ छोड़ने के लिए मजबूर किये गये हिमांशु कुमार के मुताबिक बैलाडीला में कई कंपनियों को लोहे की खदानों की लीज दी गयी है जिसमें टाटा और एस्सार जैसी कंपनियां भी शामिल हैं जो एक से बढ़ कर एक अपनी घाघ तिकड़मों के लिए जानी जाती हैं और इसलिए बच निकलती हैं कि उनकी ऊंची सियासी पहुंच है या कहें कि सियासत ही उनकी जेब में रहती है। खैर, लोहे को बाहर ले जाने के लिए सेना बीजा. पुर से जगदलपुर तक सड़क बना चुकी है। अब बैलेडीला से बीजापुर तक सड़क बनाना बाकी है। सारकेगुड़ा गांव जिसने कोट्टागुड़ा और राजपेटा गांव के संग 29 जून का कहर झेला, इसी रास्ते पर पड़ता है और अधूरी सड़क को पूरा किये जाने में रोड़ा है। क्या वह खूनी रात इस रोड़े को हटाने के लिए थी? कोट्टागुड़ा की पूरी कहानी सामने आनी ही चाहिए और इसमें इस सवाल का जवाब भी होना चाहिए।

सुकमा के कलेक्टर को माओवादियों के कब्जे से रिहा कराने में अपनी कामयाब भूमिका अदा करने के बाद गांधीवादी बीडी शर्मा ने कहा था कि देश में माओवाद की समस्या न तो कलेक्टर के अपहरण से शुरू हुई थी और ना ही कले. क्टर की रिहाई से ख़तम हो गयी है। उन्होंने यह टिप्पणी रिहाई के लिए हुए समझौते के मुताबिक राज्य सरकार के काम न करने से दुखी होकर की थी। यह राज्य सरकार को ताकीद थी कि वह समझदारी दिखाये वरना मसला अभी और उलझेगा। लेकिन इस नसीहत को हवा में उड़ा दिया गया और माओवादी होने के जुर्म में बेगुनाहों पर, हक और इनसाफ के पैरोकारों पर निशाना साधने का सिलसिला जारी रहा। 29 जून की घटना उसका अब तक का सबसे जालिम पड़ाव था।

माओवादियों का सफाया करने की नयी दिल्ली और रायपुर की जिद और जबरदस्ती के अभी थमने के आसार नहीं दिखते। ऐसे में माओवादी समस्या के सुलटने के सुराग भी नहीं मिलते। मिल भी नहीं सकते। आदिवासियों के साथ जब तक दुश्मनों जैसा सुलूक जारी रहेगा, माओवादियों की बढ़त होती रहेगी, उनका दायरा फैलता रहेगा। विकास के नारों, कल्याणकारी कार्यक्रमों और माओवाद विरोधी डुगडुगी से उसे रोका नहीं जा सकता। फिलहाल, सरकारी जिद और जबरदस्ती के आलम को देख कर तो यही लगता है कि अंधेरी रात अभी बहुत लंबी है।

याद किये गये शहीद नियोगी

पिछली 28 सितंबर को नियोगी शहादत दिवस के मौके पर कई जगह आयोजन हुए। भोपाल, मुंबई समेत कई जगहों पर आयोजन हुए। छत्तीसगढ़ में भी हुए– छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा के नाम पर ही तीन आयोजन हुए। इनमें दो भिलाई में हुए– एक किलोमीटर के फासले पर दो जनभाएं। यह आंदोलनों में 'झंडा ऊंचा रहे हमारा' की बढ़ती प्रवृत्ति का नमूना है। छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा (मजदूर कार्यकर्ता समिति) इस मायने में बाकी दोनों से अलग दिखता है कि वहां सामूहिक नेतृत्व है। बाकी दोनों हिस्से अपने नेताओं के नाम से जाने जाते हैं।

बहरहाल, छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा (मजदूर कार्यकर्ता समिति) की ओर से दोपहर एक बजे रावणभाठा (जामुल कैंप) से ढोल–नगाड़े की थाप और शहीद नियोगी की तसवीर के साथ कोई दो हजार मजदूरों का जुलूस निकला और जो छावनी चौक पर पहुंच कर जन सभा में बदल गया। सभा की शुरूआत खैरागढ़ से आये साथियों के बैंड वादन से हुई। संस्कृतिकर्मी कलादास डेहरिया की अगुवाई में उनकी संगीत मंडली ने शहीद नियोगी और शहीद भगत सिंह को क्रांतिकारी श्रद्धांजलि अर्पित करता गीत प्रस्तुत किया। इस गीत को कलादास ने ही लिखा और स्वरबद्ध किया है।

जन सभा में जिन वक्ताओं ने अपने विचार प्रकट किये, उनमें विष्णु यादव, बंसी साहू, राजकुमार, रमाकांत, कल्याण पटेल, भगवती साहू आदि समेत इलिना सेन भी शामिल थीं। सभी भाषणों का मुख्य सार यही था कि शहीद नियोगी को श्रद्धांजलि देने का मतलब है– समय की चुनौतियों को समझना और संघर्षों को तेज करना। पूरे आयोजन के दौरान शहीद नियोगी जी का दिया यह लोकप्रिय नारा गूंजता रहा– हम बनाबो नवी पहिचान, राज करही मजदूर–किसान।

– भान साहू

पोस्को : बर्बर दमन व छल के बीच जारी है प्रतिरोध

अभी हाल ही सरकार तथा पोस्को कंपनी द्वारा जनमानस को भ्रमित करने के लिए 'मीडिया अभियान' शुरू किया गया है। इसके तहत यह दावा किया जा रहा है कि प्रस्तावित स्टील प्लांट का आकार छोटा कर दिया गया है, स्थानीय लोगों का उन्हें सहयोग मिल रहा है तथा स्टील प्लांट का निर्माण कार्य अक्टूबर 2012 में शुरू हो जायेगा। स्पष्ट रूप से यह मीडिया अभियान संयंत्र के समर्थन में 'फील गुड' माहौल पैदा करने के लिए शुरू है। इन दावों से सावधान रहिये, क्योंकि इनमें से ज्यादातर दावे चकित कर देनेवाले हैं।

असलियत यह है कि लोग अभी भी इस संयंत्र का जोरदार विरोध कर रहे हैं। अभी 9 जुलाई 2012 को भारी बारिश के बावजूद 700 ग्रामवासियों ने ढिंकिया गांव की रैली में हिस्सा लिया। नवीन पटनायक सरकार द्वारा प्रस्तावित पोस्को स्टील प्लांट सयंत्र के लिए हमारी भूमि का अधिग्रहण करने की इस चाल के खिलाफ हमने अपने मजबूत विरोध को दोहराया है।

700 एकड़ सरकारी जमीन को जिसमें कोई 500 एकड़ में पान की बेलों की खेती है तथा एक लाख से ज्यादा काजू के पेड़ हैं और जो कि हमारे गांव वालों से संबंधित हैं, राज्य सरकार हथियाने की तैयारी कर रही है। गोविंदपुर गांव से जुड़ी इस वन भूमि को अधिग्रहीत करने के लिए कंपनी तथा सरकार हमारे लोगों पर 'फांसो और बांटो' तकनीक का इस्तेमाल कर रही है। यद्यपि हम इन कुटिल चालों को हराने के लिए दृढ़निश्चित हैं जो कि हमारी एकजुटता तथा एकता को साबित करता है।

मीटिंग में यह निर्णय लिया गया कि इसी तरह की बैठकें दूसरे गांवों, जैसे गोविंदपुर, पाटाना तथा नुआगांव में भी आयोजित की जायेगी। इसके बाद बाताईकीरा पर एक बड़ी रैली की तैयारी की जायेगी। जैसा कि आप जानते होंगे, बाताईकीरा पर हमारे गांववाले जून 2011 से लगातार धरने पर बैठे हैं। गांववालों ने यह वादा किया है कि यह पोस्को के लिए सरकार द्वारा जमीन अधिग्रहण करने की किसी भी कोशिश को विफल कर देंगे। हमारे लोगों ने कई जगह पर बैरिकेट लगा दिए हैं ताकि सरकारी अधिकारी इन क्षेत्रों में प्रवेश न कर सकें।

हमें मीडिया द्वारा यह पता चला है कि प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने दक्षिण कोरिया सरकार को यह आश्वासन दिया है कि संयंत्र का निर्माण कार्य जुलाई 2012 से दुबारा शुरू हो जोयगा तथा साथ ही उन्होंने राज्य सरकार को यह निर्देश दिया है कि संयंत्र के लिए भूमि अधिग्रहण समेत सारी औपचारिकताएं जल्द से जल्द पूरी की जायें।

सरकार तथा पोस्को द्वारा स्टील प्लांट की क्षमता को 12 एमटी से 8 एमटी कर देना इसके लिए 4004 एकड़ भूमि की जरूरत को घटा कर 2700 एकड़ करना, इसी कड़ी में ताजा कदम है। सरकार कह रही है कि वह पोस्को के लिए निजी भूमि का अधिग्रहण नहीं करेगी। प्लांट के साइज को कम करना तथा निजी भूमि का अधिग्रहण न करना, इसका कोई मतलब नहीं रह जाता। क्योंकि इसमें अभी भी बड़ी मात्रा में सरकारी जमीन का हथियाया जाना शामिल है। जिस पर हमारा वनाधिकार कानून 2006 के तहत कानूनी अधिकार है। हमारे लोग सरकार तथा पोस्को की इस चतुरता को अच्छी तरह से जानते हैं कि वह हमारी उपजाऊ कृषि भूमि को धीरे–धीरे हथियाकर हमारी आत्मनिर्भर तथा टिकाऊ अर्थव्यवस्था को नष्ट कर देंगे। प्रशासन बीते सालों में एक एकड़ भूमि का अधिग्रहण भी नहीं कर पाया है और ना ही कर पायेगा।

आप जानते होंगे कि नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल ने 30 मार्च 2012 को 2011 के पर्यावरणीय आदेश को रद्द कर दिया है। बेंच ने कहा ''कानून की नजर में यह सारी प्रक्रिया दूषित तथा अमान्य है''। पर्यावरण एवं वन मंत्री जयंती नटराजन ने नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल के आदेश पर स्टील प्लांट की पर्यावरणीय मंजूरी को रिव्यू करने के लिए तीन सदस्यीय कमेटी का गठन किया है। नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल की कमेटी के सदस्यों के बारे में ''सब्जेक्ट एरिया एक्सपर्ट'' जैसे सीधे व साफ निर्देश के बावजूद बड़ी हैरानी की बात है कि ऐसा प्रतीत हो रहा है कि इस कमेटी का अध्यक्ष कोई आई.ए.एस. अधिकारी ही बनेगा। इसमें कोई संदेह नहीं कि सरकार अपने इस गैरकानूनी कदम पर लीपापोती भी कर देगी। हम किसानों को उनकी जमीन के अधिकारों तथा अपने देश के संसाधनों की लूट के खिलाफ अपने वनों और प्राकृतिक संसाधनों को बचाने के लिए अपने संघर्ष को जारी रखने के लिए दृढ़संकल्प हैं। हम हमेशा इस संयंत्र का विरोध करते रहेंगे।

– प्रशान्त पैकरा

वैश्वीकरण विरोधी आन्दोलनकारी प्रोफेसर बनवारीलाल शर्मा को श्रद्धांजलि

आजादी बचाओ आन्दोलन के संस्थापक प्रोफेसर बनवारीलाल शर्मा का 26 सितम्बर 2012 की सुबह चंडीगढ़ में देहान्त हो गया। वैश्वीकरण की गुलाम बनाने वाली नीतियों के विरुद्ध जन आन्दोलनों के वे प्रमुख नेता थे। विनोबा भावे से प्रेरित अध्यापकों के आन्दोलन 'आचार्यकुल' के वे प्रमुख स्तम्भ थे। इलाहाबाद विश्वविद्यालय अध्यापक संघ के वे तीन बार निर्विरोध अध्यक्ष चुने गये थे। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के मकड़जाल से देश को सावधान करने के लिए आपने 'साथियों के नाम' बुलेटिन,नई आजादी का उद्घोष नामक पत्रिका शुरु की,सतत चलाते रहे तथा कई पुस्तकें लिखीं और अनुवाद भी किया। गणित का विद्यार्थी होने के कारण आपने फ्रेंच भाषा पर भी अधिकार कायम किया था। अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए उनकी निष्ठा,तड़प और सक्रियता कार्यकर्ताओं के लिए हमेशा प्रेरणा का स्रोत रहेगी।

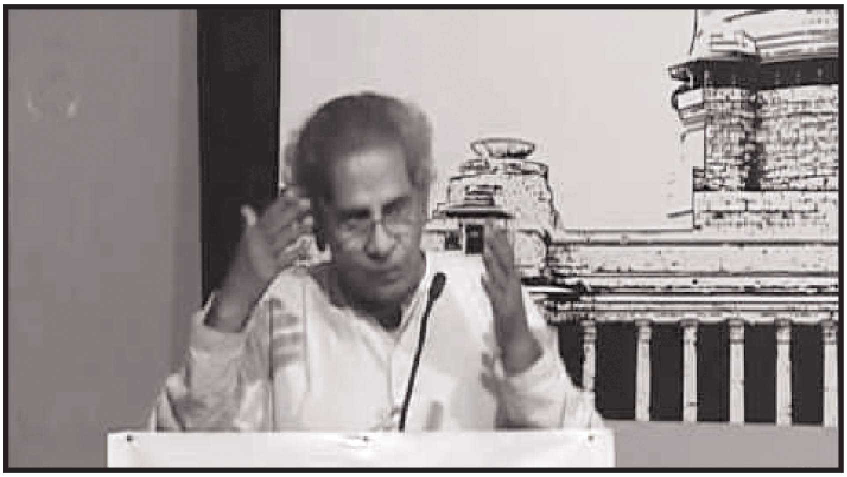

संघर्ष संवाद अपने वरिष्ठ साथी की स्मृति को प्रणाम करती है तथा उनके जीवन से प्रेरणा लेती रहेगी।

संघर्ष संवाद देश में चल रहे आन्दोलनों की सूचनाएं, उनके लिए उपयोगी जानकारी एवं विश्लेषण मुहैया कराने वाली एक लोकप्रिय पत्रिका साबित हुई है। जून माह से इसके वेब–संस्करण (sangharshsamvad.org) की शुरूआत की गयी है जिसमें आप सबका स्वागत है।

आपसे अनुरोध है कि आप अपने या अपने इलाके में चल रहे जनसंघर्षों की रिपोर्ट संघर्ष संवाद से साझा करें ताकि दूसरे आन्दोलनों के साथियों को भी आपके आंदोलन के बारे में जानकारियाँ मिलती रहे। एक दूसरे के संघर्षों से सीखना और संवाद कायम करना आज के दौर में जनांदोलनों को एक सफल मुकाम तक पहुंचाने के लिए जरूरी है।

संघर्ष संवाद में अपनी रिपोर्ट भेजते समय इन बातों का ध्यान रखें–

1. अपनी रिपोर्टें आप हमें लिखित या हिन्दी में टाइप करके भेज सकते हैं।
2. रिपोर्टें जनसंघर्षों पर ही आधारित हों. रिपोर्ट के साथ आंदोलन से जुडी हुई विज्ञप्तियां, ज्ञापन, फोटो, परचे, निमंत्रण इत्यादि भी भेजें।

आप अपने जन संघर्षों के बारे में जानकारी sangharshsamvad@gmail.com पर ईमेल द्वारा दे सकते हैं अथवा निम्न पते पर डाक द्वारा भी भेज सकते हैं।

पॉपुलर इन्फॉर्मेशन सेंटर

ए–124/6, दूसरी मंजिल, कटवारिया सराय, नई दिल्ली–110 016

फोन/फैक्स: 011–26968121/26858940

ईमेल: sangharshsamvad@gmail.com